अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ का साप्ताहिक मुखपत्र

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञमूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक

वार्षिक मूल्य ६) ✠ सम्पादक : धीरेन्द्र मजूमदार ✠ एक प्रति २ आना

वर्ष–३, अंक–१८ ✠ राजघाट, काशी ✠ शुक्रवार, १ फरवरी, '५७

मानव मानव सब हैं समान !

गूँजे जय-ध्वनि से आसमान
मानव-मानव सब हैं समान

निज कौशल, मति, इच्छानुकूल
सब कर्म निरत हैं भेद-मूल
बंधुत्व-भाव हो विश्व-मूल
सब एक राष्ट्र के उपादान

जन-उन्नति का हो खुला द्वार
हो पंचशील जीवनाधार
हो मुक्त कर्म वाणी विचार
हो श्रेय, प्रेय के एक प्राण

श्रम उद्यम हो गौरव प्रधान
सब कर्मों का हो उचित मान
सब कण्ठों में हो एक गान
मानव-मानव हैं सब समान

—सुमित्रानन्दन पंत

निधि-मुक्ति और तंत्र-मुक्ति का रसायन और पथ्य-परहेज

(दादा धर्माधिकारी)

पळनी में सर्व-सेवा-संघ ने निधिमुक्ति और तंत्रमुक्ति का प्रस्ताव किया। उस प्रस्ताव को हर एक ने अपनी-अपनी भूमिका के मुताबिक समझा और समझाया। उसकी अनेक अधिकृत और अनधिकृत व्याख्याएँ भी हुईं। कुल मिला कर पळनी में जो कदम उठाया गया, उसका असर अच्छा ही हुआ है। बीच के दर्ज़े के जो मध्यम नेता हैं, उनमें से कुछ अपनी व्यक्तिगत मुश्किलों के सबब से और दिल को कमजोरी के सबब से कुछ दुविधा में जरूर पड़े हैं। लेकिन जिनकी रग-रग में फुर्ती है और जिनकी धमनियों में ताज़ा खून बह रहा है, उन तरुण कार्यकर्ताओं ने, स्त्री और पुरुष दोनों ने, हिम्मत और उत्साह के साथ पळनी के निर्णय का स्वागत ही किया है। यह सब देख कर हमें भी काफी बल मिला है और प्रसन्नता हुई है।

पळनी का प्रस्ताव साधन-शुद्धि की दिशा में अगला कदम है। भूदानयज्ञ-आन्दोलन सामाजिक अर्थ-शुद्धि का आंदोलन है। व्यक्ति के लिए आहार-शुद्धि का जितना महत्त्व है, उससे कहीं अधिक महत्त्व समाज के लिए अर्थ-शुद्धि का है। आहार प्राप्त करने के मार्ग और तरीके भी शुद्ध होने चाहिए। संचित निधि के भरोसे अगर क्रांतिकारी कार्यकर्ताओं का योगक्षेम चलता रहे; तो कुछ लोगों को यह डर रहता है कि वह एक तरह से परावलंबी हो जायगा, उसमें साहस नहीं रहेगा। निधि से उसे जो सुरक्षितता मिलती है, वह उसके लिए सोने की बेड़ी बन जायेगी। इसलिए जब हमने देखा कि हमारे ज्यादातर तरुण कार्यकर्ताओं ने, जिनमें कई गृहस्थाश्रमी हैं और पितृत्व के गौरव से भी सम्पन्न हैं, निधि-मुक्ति का हृदय से स्वागत किया है, तो हमें आनन्द हुआ।

भगवान् कब हँसते हैं ?

भगवान् दो अवसरों पर हँसते हैं : एक तो तब, जब एक ही माँ-जाये भाई हाथ में जरीब लेकर जमीन नापते हैं और कहते हैं, "यह 'मेरी' जमीन है और यह 'तेरी' जमीन है।" और दूसरे समय तब, जब रोगी तो मरणासन्न हो और फिर भी डॉक्टर कहे कि "मैं इसे अच्छा कर दूँगा !" —रामकृष्ण परमहंस

निधिमुक्ति का वास्तविक अर्थ है, संग्रह का आधार ही छोड़ देना। आखिर संग्रह मनुष्य इसीलिए करता है कि विपत्ति के समय वह बिल्कुल विवश न हो जाय। समाजवाद ने इसमें से सामुदायिक संचय या सार्वजनिक संग्रह का रास्ता निकाला। इससे व्यक्तिगत संग्रह की जरूरत और आकांक्षा कम हो सकती है, लेकिन सामुदायिक या सार्वजनिक निधि का आश्रय खोजने की वृत्ति कम नहीं होती। अर्थात् अपरिग्रह की भावना जाग्रत नहीं होती। असंग्रह या अपरिग्रह में सामुदायिक परिग्रह या सार्वजनिक संचय का भी निषेध है।

आज, जब कि हम ग्रामीकरण और ग्रामराज्य की बात कर रहे हैं, इस तत्त्व को भली-भाँति समझ लेना बहुत जरूरी है। 'सारी जमीन गाँव की' और 'सारी दौलत गाँव की' से मतलब यह है कि व्यक्ति की तरह गाँव भी जमीन और दौलत का थातीदार है, धरोहर संभालने वाला है। जमीन या दौलत का वह मालिक नहीं है। नहीं तो 'राज्यनिष्ठ पूँजीवाद' (स्टेट् कॅपिटेलिज्म), की जगह हम 'ग्रामनिष्ठ पूँजीवाद' (विलेज कॅपिटेलिज्म) कायम करके हाथ मलते रह जायेंगे। व्यक्ति की जमीनदारी गयी, गाँव की जमीनदारी आयी। तरक्की जरूर हुई। लेकिन आर्थिक मूल्यों में परिवर्तन नहीं हुआ। राज्य के स्वामित्व की जगह संकीर्ण क्षेत्रीय स्वामित्ववाद ने ले ली। संचित अन्न पर जिस तरह श्रमनिष्ठ भूखे का स्वतःसिद्ध अधिकार है, उसी तरह एक गाँव के संचित अन्न, वस्त्र और जीवन-सामग्री पर दूसरे अभावग्रस्त और गर्जमंद गाँवों का स्वतःसिद्ध अधिकार है। स्वावलम्बन और स्वयंपूर्णता का सिद्धान्त तभी लोकनिष्ठ अर्थ-नीति का अंग माना जा सकेगा और तभी से उसे हम 'स्वदेशी व्रत' की संज्ञा से महिमान्वित कर सकेंगे।

निधि-मुक्ति का अर्थ संचित धन या संग्रह का अथवा निधि-धारकों का या संग्रहशील व्यक्तियों का बहिष्कार नहीं है। यदि ऐसा होता, तो संपत्तिदान के लिए भूदान-यज्ञ-आन्दोलन में कोई अवसर ही नहीं रहता। निधिमुक्ति और परिग्रह का विसर्जन समाज के सभी सदस्यों के लिए है। इसलिए जो संपत्तिमान लोग या थातीदार सार्वजनिक सेवकों के योगक्षेम की जिम्मेवारी नम्रतापूर्वक, स्वकर्तव्य-भावना से उठाना चाहें, उनकी सहायता का स्वीकार आदरपूर्वक निःसंकोच वृत्ति से करना चाहिए। इसमें हम उनके संग्रह में या उपार्जन की विधि में साझेदार नहीं होते, बल्कि उनके संग्रह-विसर्जन में हाथ बँटाते हैं। शर्त इतनी ही है कि हम उनके आश्रित न बनें। 'सहायता हर किसीकी, आश्रय समाज का', यही हमारी आन हो। सीधे-सादे शब्दों में, कार्यकर्ता के लिए आज निधिमुक्ति का अर्थ है, नियत समय पर मिलने वाले निश्चित और निर्धारित वेतन का त्याग। आर्थिक सुरक्षितता का त्याग इस नितांत दरिद्रता और बेकारी से परिपीड़ित देश में कोई छोटा कदम नहीं है।

व्यक्तियों से मदद लेने पर भी सहारा समाज का ही खोजने में कार्यकर्ता की स्वतंत्रता अक्षुण्ण रहती है। नहीं तो उसका बुरा हाल होगा। दो-चार मालदार व्यक्तियों का वह 'क्रीतदास' बन जायगा। उनकी धौंस उसे सहनी पड़ेगी। वह अपनी आजादी खो बैठेगा। सत्ता के क्षेत्र में हमने यह तमाशा देखा है। हर हलके में दो-चार व्यक्ति ऐसे होते हैं, जिनकी धाक उस इलाके के लोगों पर होती है। इन्हें 'कुंजीवाले मतदाता' ('की वोटर') कहते हैं। वे वोट जुटाने में सिद्धहस्त होते हैं। चुनाव के बाद जब उम्मीदवार सदस्य बन जाता है, तो फिर इनकी फर्माइशें शुरू होती हैं। बेचारा सदस्य आनाकानी नहीं कर सकता, क्योंकि इनके अहसान से दबा हुआ होता है। उनकी नाजायज माँगें भी उसे शिरोधार्य माननी पड़ती हैं। इस तरह सत्ता का उम्मीदवार वोट-फरोशों का दास बन जाता है। संपत्तिदान के क्षेत्र में तो इससे भी अधिक नैतिक बल की जरूरत होगी। कार्यकर्ता सभी मनुष्यों का सहयोग चाहेगा, परंतु आश्रित होगा 'निर्विशेष मानव' का। जब वह दूसरों के श्रमदान से अपनी गुजर करेगा, तब भी उसकी यही मर्यादा होगी। अगर संपत्तिदाता उस पर अपना अधिकार मान सकते हैं, तो श्रमदानी भी मान सकते हैं।

www.vinoba.in

तंत्र-मुक्ति के विषय में और भी अधिक सतर्कता की आवश्यकता है। तंत्र-मुक्ति का अर्थ 'कामाचार' नहीं है। तंत्र-मुक्ति का निर्णय मनमाना बर्ताव करने की सनद नहीं है। कार्यकर्ता अगर अपने मन में यह समझें कि चलो, अब हमसे कोई जवाब तलब करने वाला नहीं है, हम अपने मन के राजा हैं और अपने इलके के चक्रवर्ती हैं, तो हमारी तंत्रमुक्ति क्षुद्र स्थानीय सत्तावाद के असीम मरुस्थल में तिरोहित हो जायगी और हम सब निरंकुश स्वच्छन्दता के फ़र्मांबरदार बन जायँगे। तंत्रमुक्ति का अर्थ तंत्रहीनता नहीं है। सत्तानिरपेक्ष क्रांति अराजकता की हरकारी नहीं है। आज की सरकार की शासन-क्षमता दिन-प्रति-दिन कम होती जा रही है। अराजकता की वृत्ति जोर पकड़ रही है। अराजकता हमेशा उद्दंडता की वेदी पर धूप-दीप चढ़ाती है। जीवन के सभी क्षेत्रों में उच्छृङ्खलता बढ़ रही है। ट्रेनों में बगैर टिकट के या बिना अधिकार के चढ़ने वालों में कृतविद्य विद्यार्थी, सार्वजनिक कार्यकर्ता तथा सरकारी अधिकारी, सभी होते हैं। किराये की मोटरों में और अन्य सवारियों में गैरकानूनी तौर से भीड़ करना, उनसे नाजायज़ फायदा उठाना, इत्यादि व्यवहारों में हमारे कार्यकर्ता भी कोई बुराई नहीं समझते। "शांति का और व्यवस्था का जिम्मा शासकों का है आंदोलन का और संघर्ष का हमारा," यही मानों उनके कर्मयोग का सूत्र है।

उद्दंडता और अव्यवस्था को रोकने की शक्ति सत्याग्रह की आत्मा है। भड़काने और उत्तेजित करने की शक्ति बहुत से जोशीले और सरफ़रोश कार्यकर्ताओं में होती है। लेकिन संवरण और संयम की क्षमता उनमें बहुत कम पायी जाती है। वह शक्ति संयम और अनुशासन से पैदा होती है। अब कार्यकर्ता अपने विवेक के खिलाफ मजबूरी से किसीका हुक्म नहीं मानेगा और वह यह भी नहीं चाहेगा कि उसके साथी या उसके कार्यक्षेत्र के निवासी विवेक के प्रतिकूल उसकी बात माने। परंतु वह अपने आचरण में शिष्टाचार, सभ्यता और कानून की मार्यादाओं का पालन मनःपूर्वक करेगा और दूसरों को उन मर्यादाओं के पालन के लिए प्रेरित एवं प्रोत्साहित करेगा, तभी हमारी यह तंत्रमुक्ति वास्तविक लोकसत्ता की पुरोगामिनी कल्याणी सिद्ध होगी। अन्यथा आँधी के बीज बोकर हम बवंडर खड़ा करेंगे, जो हमारे पैर भी जमीन से उखाड़ देगा।

निधिमुक्ति और तंत्रमुक्ति के रसायन के कुछ अनुपान और पथ्य कार्यकर्ताओं के विचार के लिए आज प्रस्तुत किये हैं। पत्नी के प्रस्ताव के तीन महीने बाद अर्थात् संवत्सर का एक चरण बीतने के बाद अब कार्यकर्ता प्रत्यक्ष प्रयोग की दृष्टि से उनके विषय में शांत चित्त से सोच सकेंगे।

काशी, २०-१-'५७

स्वराज्य की कसौटी : बालक !

(विनोबा)

बच्चों को तमिल में "पिळ्ळै" कहते हैं और भगवान् गणपति को "पिळ्ळैयार" कहते हैं। हम इन दोनों में कोई फर्क नहीं करते हैं। हम जिस देवता का प्रत्यक्ष स्मरण करते हैं, वे ही तो यहाँ बैठे हैं ! इस देश में बच्चों के लिए जो भावना है, वह शायद ही दूसरे किसी देश में हो। वैसे, योरप-अमेरिका में बच्चों को बहुत ही अच्छी तरह रखा जाता है। [उस हिसाब से हिंदुस्तान में बच्चों की अच्छी परवरिश नहीं होती है। उसके कारण दूसरे हैं। लेकिन बच्चों के लिए इस देश में जो भावना है, वह शायद दूसरे देशों से कम नहीं है, बल्कि कुछ ऊँची ही है। यहाँ पर भगवान् को बाल-रूप में देखने की भक्तों को बहुत लालसा होती है। बालकृष्ण, बलराम, कुमारन्; ये सारे परमेश्वर के बालस्वरूप हैं। मनुष्य अपने प्रेम से भगवान् को अलग-अलग रूप में देखता है। पिता-माता के रूप में परमेश्वर को देखने का तो सर्वत्र रिवाज है ही। सखा और पति के रूप में भी देखते हैं। कुछ भक्ति-मार्गों में तो भगवान् को पत्नी-रूप में भी देखते हैं। अपने देश में भगवान् को बालरूप में भी देखने का रिवाज है। पर भगवान् की सबसे श्रेष्ठ भक्ति बालक-रूप में मानी जाती है। भगवान् तो सर्वशक्तिशाली माने गये हैं। वे हम सबकी रक्षा करते हैं। इसलिए उनको माता-पिता की उपमा दी जाय, तो वह ठीक ही है। उनका हम पर बहुत प्रेम है, वे बहुत मदद देते हैं, तो मित्र, पति और पत्नी के रूप में भी देखने का रिवाज है। लेकिन ईश्वर हमारे हाथ में बालक-रूप में है। अतः यह बहुत बड़ी बात है कि इस ईश्वर की रक्षा हमको करनी है। अगर हम ईश्वर की रक्षा नहीं करते हैं, तो वह जिन्दा ही नहीं रहेगा ! उसका जीवन बहुत खतरे में होगा, अतः उसकी हम ही को रक्षा करनी होगी और जुग-जुग जीओ, ऐसा उसे कहना पड़ेगा। उसका पालन-पोषण भी हम ही करते हैं ! कौशल्या ने और यशोदा ने उसकी इसी तरह उपासना की थी। हर एक माता-पिता यह कर सकते हैं। उनको समझना चाहिए कि हमारे घर में परमेश्वर ही जन्म पाये हुए हैं। फिर बच्चों के लिए न सिर्फ प्रेम रहेगा, बल्कि आदर-भाव भी रहेगा।

परंतु अपने देश में बच्चों की हालत बहुत बुरी है। भावना में तो अच्छी है, परंतु योजना में बिलकुल गलत है। स्वराज्य-प्राप्ति को आठ-दस साल हो गये। आठ-दस साल में कम से कम बच्चों को तो स्वराज्य का अनुभव आना ही चाहिए था ! औरों की हालत सुधरे या न सुधरे, जल्दी सुधरे या आहिस्ता सुधरे, तो उसकी बहुत ज्यादह पर्वाह नहीं, परंतु बच्चों की हालत फौरन सुधरनी चाहिए। पर आज १० या १२ प्रतिशत को ही तालीम मिलती है ! बाकी के लोगों को तालीम का सवाल ही नहीं है। तालीम के साथ पैसे का संबंध जुड़ गया है। कहते हैं कि बच्चों को पढ़ाने के वास्ते हमारे पास पैसे नहीं हैं, बच्चों को ज्यादा तालीम हम एकदम नहीं दे सकते हैं। हम यह समझ सकते हैं कि पैसा कम है, इसलिए बीड़ी खरीद नहीं सकेंगे। परंतु पैसा नहीं है, इसलिए बच्चों की तरफ़ ध्यान नहीं दे सकते हैं, ऐसी बात कोई भी माँ-बाप नहीं कह सकते। स्वराज्य हाथ में आने के बाद उसके आगे कुछ प्राप्त-कर्तव्य होते हैं। खेत जब तक दूसरे के हाथ में था, तब तक उसका कब्जा पाना ही एक कर्तव्य था। परंतु वह खेत अपने हाथ में आ गया, तो अब काश्त करने के काम का आरंभ होगा। पर लोग समझे कि अब तो स्वराज्य आ गया, इसलिए अब भोग भोगने का समय आ गया, अब सारी सत्ता अपने हाथ में आ गयी। सब पूछने लगे कि मुझे कौनसा पद मिलेगा ? किसीने कहा, मैं बारह साल जेल में था। किसीने कहा, मैं १५ साल, हम सबको कुछ मिलना चाहिए, यह प्राप्ति का मौका है ! पर खेत हाथ में आ गया, तो क्या कंकड़, मिट्टी और पत्थर खायेंगे ? खेत हाथ में आया याने मेहनत करने का मौका आया ! लेकिन यही तो समझते नहीं हैं। पदवी, नौकरी आदि की तलाश में ही सब हैं। कभी चुनाव आयेगा, तो सब कहेंगे कि मुझे वोट दे दो, मैं आपको स्वर्ग में ले जाऊँगा ! दूसरा कहेगा, उसको वोट मत दीजिये, वह नर्क में ले जायेगा, मुझे सब दे दो, मैं आपको स्वर्ग में ले जाऊँगा। यह कोई नहीं कहता है कि तुम्हारा स्वर्ग और नर्क तुम्हारे हाथ में है, हम तुम्हारे उद्धार-कर्ता नहीं हैं !

स्वराज्य ठीक है कि बेठीक, उसकी कसौटी हम बच्चों की हालत पर से करेंगे। सब बच्चों की समान परवरिश की गुंजाइश होनी चाहिए। किसी विद्वान् को ज्यादा ज्ञान होने के कारण ज्यादा तनख्वाह मिलती है, यह समझ में नहीं आता है, परंतु क्षण भर मान लीजिये की ज्यादा योग्यता होने के कारण उसको ज्यादा पैसे दिये जा रहे हैं। एक बाजू विद्वान्, श्रीमान् और कोई बड़े अधिकारी हैं; उन सबको अपनी-अपनी योग्यता के अनुसार ज्यादा तनख्वाह दी जा रही हैं। दूसरी ओर गरीब और किसान या मजदूर हैं और उनको कम पैसे मिलते हैं ! क्योंकि उनकी योग्यता कम मानी जाती है। अब इन दोनों के घर में बच्चे हैं। विद्वान-श्रीमान् के बच्चों की परवरिश अच्छी होती है और गरीब किसानों के बच्चों की परवरिश कम होती है। पर ऐसा क्यों होना चाहिए? क्या ऐसा नियम है कि श्रीमान् के घर में ज्ञानी ही पैदा होंगे और गरीब के घर में हमेशा मूर्ख ही पैदा होंगे ? गौतम बुद्ध एक राजपुत्र थे। परंतु कितने ही राजाओं के पुत्र महामूर्ख शिरोमणि निकले हैं। एक गौतम बुद्ध ही क्या उनको ढाँकने में समर्थ हैं ? शंकराचार्य दरिद्री कुल में ही पैदा हुए थे। तो, ऐसा कोई नियम नहीं है कि गरीबों के घर में मूर्ख ही पैदा होंगे। एक बाप दूसरे बाप से ज्यादा लायक है, तो उसका ज्यादा इंतजाम भले हो, लेकिन दोनों के बच्चे तो समान ही हैं। विद्वान का लड़का गले में वेद का ग्रंथ बांध कर और श्रीमान का लड़का हाथ में अलंकार पहने हुए भगवान् ने नहीं भेजा था। अधिकारी का लड़का बड़ा लिबास पहन कर जन्मा है, ऐसा नहीं है। सभी बच्चे नंगे ही पैदा हुए थे। लड़कों को जैसी तालीम दोगे, वैसी उनकी योग्यता बनेगी। सब बच्चों को समान रक्षण, पोषण और शिक्षण दिया जाय, तो देश में काफी ज्ञानी निकलेंगे। फिर क्या वजह है, जो बच्चों को कम-बेशी पोषण मिले ? इसलिए शहर के भाई-बहनों को करुणावान् बनने की आवश्यकता है। जो बड़े कहलाते हैं, उन सबको करुणामय होकर सबसे नीचे जो भाई-बहन हैं, उनके बाल-बच्चों के वास्ते एक हिस्सा सतत देते रहना चाहिए। जो अखीर में हैं, अंत्य हैं; उनका उदय सबसे पहले होना चाहिए। उसीको सर्वोदय कहते हैं।

(त्रिचिनापल्ली, १८-१-५७)

---

www.vinoba.in

मूल्य-परिवर्तन की क्रांति और छात्र : १.

(जयप्रकाश नारायण)

आज विद्यार्थी बिलकुल खोये-खोये-से लगते हैं, किसीमें उनकी दिलचस्पी ही नजर नहीं आती। स्वराज्य के जमाने में भी उनमें बहुत रुचि थी, ऐसी बात नहीं; लेकिन फिर भी उनमें जो प्राणवान् युवक थे, वे गुलामी का दर्द समझते थे। उन्होंने चाहे बम-पिस्तौल का रास्ता लिया हो या सत्याग्रह का, लेकिन कुछ में बहुत तड़पन थी। पर स्वराज्य के बाद हमें अब कोई काम करना है, ऐसा उनको लगता ही नहीं है। वे मानते हैं कि जिनको चुन दिया है, वे सत्ता में जाकर काम करेंगे। देश में कुछ करने लायक नहीं है, ऐसा तो वे नहीं मानते हैं। बेकारी, गरीबी, अन्याय, शोषण आदि की तरफ उनका ध्यान जाता है; लेकिन इसे वे राज्यकर्ताओं का काम समझते हैं। अब अपना काम तो पढ़ना, डिग्री लेना, नौकरी-रोजगार करना, इतना ही वे मानते हैं। अपनी कोई जिम्मेवारी देश के कामों में महसूस नहीं करते। यह भावना हमको उनके दिल और दिमागों में से हटानी होगी।

वैसे राजनीति में आज विद्यार्थियों का काफी प्रवेश है। काँग्रेस, पी. एस. पी., कम्यूनिस्ट, शेड्युल्ड कास्ट-फेडरेशन, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ आदि के अपने विद्यार्थी-संघटन भी हैं। जागरूक विद्यार्थी अपने-अपने मत के अनुसार इन दलों में काम भी करते हैं, लेकिन लक्ष्य उनका राज्य होता है। काँग्रेस के राज्य से अगर कुछ नहीं होता है, तो दूसरा राज्य लाना चाहिए, फिर वह कोई भी हो। इससे भिन्न कोई नया रास्ता या नया तरीका वे नहीं सोचते हैं, न राजशक्ति से अलग किसी दूसरी शक्ति के संगठन द्वारा समस्याओं के हल की बात सोचते हैं। काम का सारा भार राज्य पर सौंप कर नागरिक अकर्मण्य बन जाता है और विद्यार्थी कुछ समस्याएँ देखता भी है, तो उसका हल राज्य में ही पाता है। इसलिए उनका यह रुख-परिवर्तन हमको गहराई से करना होगा एवं लोकशक्ति की राह उन्हें बतानी होगी। भूदान उसीकी राह है। मैं इसमें कुछ और गहराई से विचार प्रकट करूँ, ऐसा श्री सिद्धराज भाई कह रहे हैं, इसलिए मैं अपना दृष्टिकोण यहाँ प्रस्तुत करता हूँ।

सामाजिक समस्याओं की जड़ में एक नैतिक प्रश्न छिपा होता है। इसलिए अगर वह नैतिक प्रश्न हल नहीं होता है, तो समस्या का समाधान भी नहीं हो पाता। मान लीजिये कि कोई ऐसा देश है, जहाँ बेकारी नहीं है और वहाँ काम करने वालों की ही कमी है, तो उसका यह मतलब नहीं कि वहाँ कोई दूसरी समस्या नहीं है, अन्याय नहीं है या शोषण नहीं है। कहीं कोई इतना भूखा-नंगा न हो, जैसे कि न्यूजीलैंड, स्वीडेन में नहीं है, तो भी उसका यह अर्थ नहीं कि वहाँ आदर्श समाज बन गया है। हमारे यहाँ भी करोड़ों भूखों की समस्या हल हो जाने से ही हमारी समस्या हल नहीं होती है। अमेरिका में चार में से एक आदमी के पास आज मोटर है, रेडियो है; फिर भी आज उस देश में एक अजीब भय छा गया है। यह भय कितना अधिक है, यह हमारे समय के वहाँ के एक प्रोफेसर कॉट नियरिंग, जो अभी यहाँ आकर गये और जो यद्यपि कम्यूनिस्ट पार्टी के सदस्य नहीं हैं, फिर भी उस विचार के वे हैं, उन्होंने अपनी यात्रा के वर्णन में बताया कि छोटी-छोटी सभाएँ तक उनकी वहाँ नहीं हो पाती थीं। अगर कोई स्कूल उन्हें बुलाता भी, तो उसके मंत्री पर आफत गुजरती। भोजन के लिए कोई इनके साथ औरों को भी बुलाता, तो मेज़बान एक प्रकार से बहिष्कृत हो जाता। इस तरह से भय का भूत लोगों पर सवार है। जिस टोटेलिटेरियन रूस के खिलाफ वे इतना भय बरतते हैं, वे स्वयं उस विचार के शिकार हो रहे हैं। इसलिए इस तरह सुख-संपन्नता के बावजूद वहाँ समस्याएँ हैं। रूस में भी यही हालत है। तो हमें कहना यह है कि मानव की चाहे जितनी समृद्धि हो, कुछ समस्याएँ रहती ही हैं और उनकी जड़ में नैतिक प्रश्न ही होता है। इसका हल निकले बिना मानव के दुख-दर्द का सवाल हल नहीं हो सकता है। यह नैतिक प्रश्न है, आज का हमारे जीवन का समाज-विरोधी आधार, अनैतिक आधार, जिसके चलते सारे समाज को विकार ग्रस रहा है! इस आधार को बदले बिना रोग की जड़ दूर नहीं हो सकती।

यह अनैतिक आधार याने क्या है? मनुष्य के जीवन में एक अंतर-विरोध काम कर रहा है। यही वह है। एक तरफ आदमी समाज से इतना भर-भर कर पाता है कि उसके बिना वह जी ही नहीं सकता। लेकिन हमारे निजी जीवन में हमारे इस सामाजिक रूप का कोई असर ही नहीं होता और समाज के लिए हम कुछ करें, हमारा वह भी धर्म है, उसका कर्ज हम चुकायें, यह हम कुछ भी नहीं सोचते। इस तरह हम सामाजिक प्राणी होते हुए भी हमने समाज को ही भुला दिया है। समाज-धर्म का पालन कराने के कुछ रास्ते निकले हैं, क़त्ल और क़ानून के भी रूप में, लेकिन उनसे समाज-भावना का निर्माण नहीं हुआ है। आज सर्वत्र व्यक्ति-व्यक्ति के और समाज-समाज के और देश-देश के स्वार्थों में टक्कर होती है और इस टक्कर से विकार पैदा होता है। इसलिए जब तक हमारे जीवन का आधार नहीं बदलता है और हम सामाजिक धर्म का पालन नहीं करते हैं, तब तक समस्याओं का हल नहीं निकल सकता।

इस नैतिक समस्या की शिक्षा देने का, मनुष्य का परिवर्तन करने का काम राज्य नहीं कर सकता। कोई भी राज्य कर सकता है, अगर ऐसा होता, तो मानव-समाज में कोई भी समस्या नहीं रह जाती। फिर तो राज्य की तरफ से हुक्म मिलता कि 'ऐसा करो' और सब करते। अगर कहते कि प्रेम करो, तो प्रेम करते। त्याग करो, तो त्याग करते। सेवा करो, तो सेवा करते। सच बोलो, तो सच बोलते। पर यह होता नहीं है, हो नहीं सकता, बल्कि जो लोग राज्य करते हैं, उनके अनुकूल ही सब चलेगा। अगर डिक्टेटरशिप होगी, तो अपने मन से वह वैसा करायेगा। पर स्टालिन जैसा बड़ा डिक्टेटर भी तो कुछ करा न सका! उसने जितने लोगों को मारा, क़तल कराया, जेल में डाला, क़ैद किया, साइबेरिया भेजा; उतना शायद किसीने नहीं किया होगा। वैसे क़तल करने वाले लड़ाई के मैदान में चंगेज खां वगैरह हो सकते हैं, जो स्टालिन से बाजी मार लें, लेकिन शासक की हैसियत से अपने ही देश की जनता पर इतना अत्याचार नहीं हुआ होगा। लेकिन आखिर हम यह मानते हैं कि वह जिसको समाजवाद समझता था या साम्यवाद समझता था, उसका वह दुश्मन नहीं था। वह दिल से चाहता था कि रूस में समाजवाद कायम हो। इसे ईमानदारी से वह मानता था, सो मैं मानता हूँ। लेकिन उसने यह समझा कि हम डंडे के जोर से जितने भी समाजवादी मूल्य हैं, उनकी स्थापना करेंगे। लेकिन वह नहीं कर पाया। और बातें छोड़ भी दें, तो आर्थिक समानता तक रूस में अभी भी नहीं आ पायी, आमदनी में चालीस गुना फर्क तो वे खुद ही बताते हैं। कानून से भी समाजवादी मूल्य ग्रहण नहीं कराये जा सकते।

असल में वे शोषण की, डिक्टेटरशिप की, डिमाक्रेसी की, युद्ध की जो समस्याएँ हैं, ये सब अंत में एक नैतिक समस्या के रूप में ही हमारे सामने आती हैं और उस समस्या का हल राज्य-शक्ति से बाहर ही है। राज्य-शक्ति की 'मदद' मिल सकती है इसमें। लेकिन उसके 'द्वारा' यह काम हो नहीं सकता। अब इस जगह पहुँच करके फिर हम सोचें कि नैतिक समस्या को हल करने के लिए हमें क्या-क्या काम करने हैं। इसी विचार का एक नमूना यह भूदान-आंदोलन है। मनुष्य के नैतिक सुधार के लिए, उसके परिवर्तन के लिए, मानवीय क्रांति के लिए यह सारा चल रहा है, इसीके लिए चलाना है।

सच्चा लोकतंत्र तो तभी होगा, जब हर मनुष्य ऐसी जगह पर पहुँचे कि जो उसका अपना हक है, उसीके अन्दर वह रहे, दूसरों का हक न ले। यह गुणात्मक परिवर्तन द्वारा ही सध सकता है।

इंग्लैंड में भूदान-सहायता-यात्रा

(हैलम् टैनीसन)

विक्टोरिया-युग के अंग्रेज महाकवि आल्फ्रेड फॉर्ड टैनीसन के प्रपौत्र और इस युग के प्रसिद्ध उपन्यास-लेखक पैंतीस वर्षीय हैलम् टैनीसन ने भूदान-यज्ञ-आन्दोलन के सम्बन्ध में ब्रिटेन में बहुत काम किया है। भारत में कुँएँ खोदने के प्रसंग में और कृषि-उपयोगी औजार किसानों को सुलभ कराने के लिए उन्होंने इंग्लैंड में भूदान-कूप-कोष स्थापित किया है, जिसमें इंग्लैंड और अमेरिका के लोग भारत की इस अपूर्व क्रान्ति के सफल होने में सहायता प्रदान कर सकें। ब्रिटेन और अमेरिका के लोगों में इस आन्दोलन के प्रति दिलचस्पी पैदा करने के लिए उन्होंने 'सेंट ऑन दी मार्च' नामक पुस्तक तो लिखी ही है, सारे ब्रिटेन में चौदह सौ मील की यात्रा करके—जिसमें दो सौ मील तो वे पैदल ही चले—इस आन्दोलन के प्रति नयी चेतना और जागृति उत्पन्न करने का महत् प्रयास भी उन्होंने किया है। अपनी इस यात्रा से लौट कर अपने अनुभवों का संक्षेप में उन्होंने इस प्रकार वर्णन किया है :

"यदि थोड़े भी प्रतिष्ठित और संभ्रांत लोग अपने को इस कार्य में लगा दें, तो मैं कोई कारण नहीं देखता कि उन्हें जनसहयोग न प्राप्त हो। मेरी तो यहाँ तक धारणा है कि लोग ऐसे सद्कार्य के लिए बहुत ही प्रसन्नतापूर्वक सहायता करने को दौड़े आयेंगे। यद्यपि मैंने यार्क शहर, मिडलैण्ड और वेल्स आदि तक ही अपनी यात्रा परिमित रखी और अपनी इन यात्राओं के समय मैंने स्वार्जित श्रम से ही

www.vinoba.in

अपना निर्वाह करने का ध्यान रखा, फिर भी मैंने देखा कि मेरे चालीस भाषणों का ही लोगों पर पर्याप्त प्रभाव पड़ा। अब मुझे यह अनुभव हो गया कि लोग सच्चे कार्यकर्ताओं की सहायता करने के लिए पूर्ण रूप से तत्पर हैं।

लोग मेरी बड़ी चिन्ता किया करते थे। घड़ी, जूता, कमीज़, मोज़े मुझे भेंट में दिये गये। इतना ही नहीं, लोगों को मेरी प्रत्येक आवश्यकता के लिए बराबर ध्यान रहा करता था। मेरी विचारधारा के प्रति यदि लोगों को किसी प्रकार की शंका रही, तो उसका भी निवारण वार्ताओं से हो जाता। मुझे बड़ा आश्चर्य होता था कि लोग किस सहृदयता के साथ मेरी बातें सुनते और कितना रस लेते।

यार्क स्थित माउन्ट स्कूल की बालिकाओं ने छुट्टी के दिनों में भी कठोर परिश्रम द्वारा १२४ पौंड का संग्रह किया। एक ग्यारह वर्षीय बालिका ने तो अकेले अपने पुरुषार्थ से १५ पौंड की रक़म प्राप्त की। (एक पौंड = १३॥) रु०)

भारत में ये रक़में हम दो स्थानों पर भेजते हैं और उनसे हमारा सीधा सम्पर्क है। पहला स्थान उड़ीसा है, जहाँ की एक सिंचाई-योजना में हम सहायता प्रदान करने की कोशिश कर रहे हैं। उक्त योजना के अनुसार एक हज़ार गाँवों में कुँएँ खोदने का निश्चय किया गया है। दूसरे, मध्यप्रदेश में भूदान-पदयात्रियों के साथ काम करने वाले डोनाल्ड ग्रूम हैं। पहले स्थान के सम्बन्ध में हमें काम की रिपोर्ट वहाँ के संगठनकर्ताओं से प्राप्त होती है और मध्यप्रदेश के सम्बन्ध में ग्रूम से रिपोर्ट मिलती रहती है। यह सहायता वहीं प्रदान की जाती है, जहाँ के लोग भूदान-यज्ञ-आंदोलन के संयोजन में अपने परिश्रम से खनन-कार्य में लगे रहते हैं। व्यक्तिगत दाताओं के अभी तक कुल २००० पौंड भेजे जा चुके हैं। शेष संस्थाओं आदि के भेजना है। इस समय हमारे देश में बीस ऐसी मंडलियाँ हैं, जो भारत में चलने वाली सिंचाई-योजनाओं से प्रत्यक्षतः सम्बद्ध हैं। मंडलियों में एक नगर परिषद् है, एक रविवासरीय पाठशाला है, एक माध्यमिक विद्यालय है। अनेक गाँव और पाठशालाएँ, श्रमिक-समितियाँ और संगठन हैं।

पोचमपल्ली को हमारे कोष से सबसे पहले सहायता मिली। यार्क के माउन्ट स्कूल की बालिकाओं ने दूसरे गाँव की, जो बोधगया के पास है, पूरी सहायता करने का भार अपने ऊपर ले लिया है। मैंने इस सम्बन्ध में जो थोड़ा-बहुत प्रयास किया, उससे मुझे यह प्रतीत हुआ कि मैंने जितना काम किया है, उससे बहुत अधिक प्राप्त हुआ। इतने से ही हम यह समझ सकते हैं कि लोगों का भाव इसके प्रति कितना अच्छा है। मैं यहाँ कोई भूदान-आन्दोलन नहीं आरम्भ करना चाहता। यह देश औद्योगिक दृष्टि से पूर्णतः विकसित है। यहाँ समाज अत्यन्त संगठित और उन्नत अवस्था में है, किन्तु मैं यह जरूर चाहता हूँ कि हमें संगठन और शक्ति का जो लाभ हुआ है, उसे नयी दिशा की ओर प्रवृत्त किया जाय।

यह निश्चित समझिये कि लोगों को किसी प्रकार का भय दिखा कर उच्च आदर्शों की ओर नहीं प्रेरित किया जा सकता। आज के शान्ति-आन्दोलनों की विफलता का यही रहस्य है। इसके लिए तो हमें दृढ़ और स्थायी कामों की ओर अपनी शक्ति लगा देनी चाहिए, जिसके चलते युद्ध या अशान्ति की बातें अपने आप समाप्त हो जायँगी। अन्तर्राष्ट्रीय आधार पर पारस्परिक सहयोग का कार्यक्रम बना कर लोगों को अभावमुक्त करने का यदि हम प्रयत्न करें, तो मानव-समाज को आशा और राहत का संकेत मिलेगा। भय और आतंक के माध्यम से हम उसको जिस शान्ति के लिए उत्प्रेरित करना चाहते हैं, वह काम तो बिना उसके अपने आप संपन्न हो जायगा। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से देखने पर सभी लोग यह स्वीकार करेंगे कि किसी भी प्रश्न का भावात्मक पहलू उसके अभावात्मक पहलू से हजार गुना अच्छा होता है।

सर्वजनहिताय जो आत्मत्याग किया जाता है, उससे मनुष्य पर पर्याप्त प्रभाव पड़ता है और उसका हृदय-परिवर्तन हो जाता है, उसकी सारी दृष्टि ही बदल जाती है। नैतिक और सामाजिक क्रान्ति का यह सर्वोत्तम और प्रभावपूर्ण तरीका है। आदिम काल से आज तक जितने भी प्रसिद्ध विचारक और धार्मिक नेता हुए हैं—जैसे ईसा और गांधी आदि—उन सबकी शिक्षाओं का सार यही है।

(मूल अंग्रेजी से)

मानव-हृदय जाग्रत करने के बजाय मानवों का संग न करने की तरफ इन दिनों बहुतों की रुचि दीख पड़ती है। चीजों को संगठित कर सकते हैं, मनुष्यों को शिक्षित कर सकते हैं। (परन्तु) जब मनुष्यों को संगठित करने जाते हैं, तो हम उनकी गिनती चीजों में करते हैं। इससे विचार के व्यापक बनने की गति को हम वेग देने के बजाय कुंठित ही करते हैं। १ जनवरी का सूर्योदय, याने सब कार्यकर्ताओं का उदय। हरएक को पूर्ण आजादी और पूर्ण जिम्मेदारी।

—विनोबा

सत्-आवन की प्रार्थना : ३.

(आशादेवी आर्यनायकम्)

जेथें जातों तेथें तूं माझा सांगाती
चालविसी हातीं धरूनियां।
चालों वाटे आम्हीं तुझाचि आधार
चालविसी भार सवें माझा।
बोलों जातां बरळ करिसी तें नीट
नेली लाज घीट केलों देवा।
अवघे जन मज़ झाले लोकपाळ
सोईरे सकळ प्राणसखे।
तुका म्हणें आतां खेळतों कौतुकें
झालें तुझे सुख अंतर्बाहीं॥*

नाममाला—

ॐ तत् सत् श्री नारायण तू, पुरुषोत्तम गुरु तू,
सिद्ध-बुद्ध तू, स्कन्द विनायक, सविता पावक तू।
ब्रह्म मज़्द तू, यहव शक्ति तू, ईशु-पिता प्रभु तू,
रुद्र-विष्णु तू, रामकृष्ण तू, रहीम ताओ तू।
वासुदेव गो-विश्वरूप तू, चिदानन्द हरि तू,
अद्वितीय तू, अकाल निर्भय, आत्मलिंग शिव तू।

इसके बाद हिन्दुस्तानी तालीम-संघ, सेवाग्राम के नयी तालीम-परिवार की ओर से नीचे लिखे संकल्प किया गया :

"सेवाग्राम का नयी तालीमी-परिवार नम्रतापूर्वक यह संकल्प करता है कि सन् १९५७ में यह समाज सबसे पहले अपना सामुदायिक जीवन और सदस्यों का व्यक्तिगत जीवन भूदान-यज्ञमूलक अहिंसक क्रान्ति के अंतिम ध्येय की ओर याने सर्वोदय-समाज-रचना की ओर विकसित करने के लिए सामुदायिक प्रयत्न करेगा। साथ-साथ अधिक-से-अधिक विद्यार्थी और कार्यकर्ता सेवाग्राम के बाहर भी देश के भिन्न-भिन्न जिलों में भू-क्रान्ति का काम कर सकें, इसका प्रयत्न करेगा। हम प्रार्थना करते हैं कि इस प्रयत्न में हमें शक्ति मिले और सबका सहयोग और आशीर्वाद मिले।"

अन्त में रामधुन के साथ नयी तालीम-परिवार के सदस्यों ने भूदान के खर्च के लिए सूत्रदान किया। एक कार्यकर्ता से गुप्त संपत्तिदान भी मिला। हिंदुस्तानी तालीमी-संघ के लिए बंगाल के सदस्यों ने एक वर्ष भूदान-यज्ञमूलक क्रान्ति के लिए देने का संकल्प लिया है।

वर्धा जिले के भूदान-सेवक, जो एक साल के लिए निकल पड़े :

(१) श्री निरंजन सिंह—सेलडोह, (२) गणेशराव ठाकरे, (३) वसंतराव बोंबटकर, (४) नारायणराव काळे, (५) भगवंतराव चोरे—बोरगाँव, (६) गळाट गुरुजी—सावंगी (यवतमाळ जिला), (७) वामनराव वादाफळे—बाभुळगाँव, (८) शामराव महाजन—खैरी, (९) ठाकुरदासजी बंग। निम्नलिखित कार्यकर्ता बाद में निकलेंगे :

(१) कृष्णाजी झोरे—ग्रामसेवा मंड़ल, (२) सर्जेराव बड़े—साटोड़ा (३) जानरावजी राउत—वाटखेड़ा (४) सुमनताई बंग और (५) नर्मदा बहन। ये दोनों महिलाश्रम में शिक्षिकाएँ हैं। परीक्षा होने के बाद निकलेंगी।

(समाप्त)

---

*अनुवाद :

—जहाँ-जहाँ मैं जाता हूँ, तू मेरे साथ ही रहता है और बाँह पकड़ कर मुझे चलाता है।
—जान पड़ता है कि हम स्वयं चलते हैं, लेकिन असल में सहारा तेरा ही होता है।
—बोलने लगता हूँ, तो मेरी बकवास को तू ठीक कर देता है।
मेरी सारी लाज तू ले गया और मुझे घीट बना दिया।
—सब जन मेरे लिए लोकपाल हो गये।
सब सगे-सम्बन्धी और प्राणसखा बन गये हैं।
—'तुका' (तुकाराम) कहता है, अब मनमाना खेलता हूँ।
भीतर-बाहर तेरा सुख ओत-प्रोत हो गया है।

www.vinoba.in

संस्कृति के समन्वय का शिखर !

(विनोबा)

रामकृष्ण परमहंस बहुत पढ़े-लिखे नहीं थे, पर मानव-मात्र पर प्रेम करने की बात वे सिखाते थे। परमात्मा के अंश को पहचानना ही विद्या है, बाकी सब अविद्या ही अविद्या है, ऐसा वे मानते थे। इसलिए उनके शिष्यों को, जो विद्वान् भी थे, प्रेरणा हुई कि हम सबको गरीबों की सेवा में लग जाना चाहिए। जो अद्वैत विचार रामकृष्ण परमहंस ने बताया, वह हिंदुस्तान के लिए कोई नया विचार नहीं था। द्रविड़ प्रदेश में आचार्य शंकर ने वही कहा था। परंतु रामकृष्ण के उपदेश में विशेषता यह थी कि वे अद्वैत को व्यवहार में लाना चाहते थे। इसलिए उनके विचार-सम्प्रदाय में अद्वैत के साथ सेवा भी जुड़ गयी। इस तरह वेदांत के साथ सेवा जोड़ने की बात भारत में रामकृष्ण के शिष्यों में ही प्रथम बार पैदा हुई। सेवा करने की वृत्ति ईसाई धर्म में बहुत थी और है। हमारे यहाँ भी भक्ति-मार्ग बहुत चला, परंतु उस भक्ति के साथ समाज-सेवा नहीं जुड़ी। ध्यान-पूजा इत्यादि में ही भक्ति की समाप्ति हो जाती थी। वेदांती "सब भूतों में हम हैं और हममें सब भूत हैं," ऐसी बात बोलते तो थे, लेकिन उसके साथ कोई सेवा-कार्य नहीं जोड़ते थे। चिंतन-मात्र जुड़ा रहता था। भक्ति-मार्ग के प्रेम को सेवा का नहीं, सगुण ध्यान का रूप मिला और वेदांत को, उसके अद्वैत होने के बावजूद, सेवा का नहीं, निर्गुण चिंतन का रूप मिला। इस तरह वेदांत और भक्तिमार्ग, दोनों सेवा के लिए अनुकूल होते हुए भी उनको सेवा का आकार हिंदुस्तान में नहीं मिल पाया। यह सेवा का आकार ईसाई धर्म में है, परंतु उसके साथ अद्वैत विचार जुड़ा हुआ नहीं है। रामकृष्ण के विचार की यह विशेषता है कि उसमें हिंदुस्तान का अद्वैत-विचार भी रहा और ईसाई धर्म का सेवा का विचार भी। जहाँ अद्वैत और सेवा, दोनों जुड़ जाते हैं, वहाँ बड़ी भारी ताकत पैदा होती है। इस शक्ति का जन्म रामकृष्ण के विचार से हिंदुस्तान में हुआ।

आज, इस स्थान में बुनियादी-शाला का आरंभ हुआ है। यह गांधीजी का दिया हुआ विचार है। इस जमाने में हिंदुस्तान में जो सबसे श्रेष्ठ नाम हुए, उनमें महात्मा गांधी और रामकृष्ण के नाम आते हैं। सैंकड़ों वर्षों के बाद आज के जमाने के शायद ये ही दो नाम शेष रह जायेंगे। इस स्थान में आपने रामकृष्ण परमहंस और गांधीजी, दोनों के नाम जोड़ दिये। नाम-संयोग से जितनी ताकत आप पैदा कर सकते थे, उतनी ताकत आपने पैदा कर ली। गांधीजी अद्वैत में और भक्ति में मानते थे, लेकिन वे कर्मयोगी थे। उनके कर्मयोग को भक्ति और अद्वैत का रूप प्राप्त था। अद्वैत और भक्ति की पूर्ति गांधीजी के विचार से होती है। कर्म-योग में सेवा और उत्पादन, दोनों आते हैं। सेवा के विचार का प्रचार रामकृष्ण के संप्रदाय ने यहाँ प्रचारित किया। गांधीजी ने इस विचार को बहुत बढ़ाया और देश के कोने-कोने में पहुँचाया। लेकिन सेवा कर्मयोग का एक अंग है। उसका दूसरा अंग है उत्पादन। जैसे मजदूर लोग शरीर-परीश्रम से काम करते हैं, वैसा ही हर एक को करना चाहिए, यह कर्मयोग का बहुत ही बड़ा विचार गांधीजी ने चलाया। आचार्य शंकराचार्य जैसों ने "अद्वैत" सिखाया था, तो माणिक्यवाचकर, नम्मावार जैसों ने भक्ति सिखायी। वही भक्ति ज्ञानदेव, तुलसीदास आदि ने कही। उधर सेवा का विचार ईसा मसीह की भक्ति के साथ जुड़ा हुआ था ही। रामकृष्ण ने शंकर का अद्वैत, भक्तिमार्गियों की भक्ति और सेवा, इन तीनों को जोड़ दिया। कर्मयोग भी उसके साथ जुड़ा हुआ तो था, परंतु सेवा कर्मयोग का एक ही अंग है। उसका दूसरा अंग शेष बच जाता था, वह गांधीजी ने ले लिया। इस तरह गांधीजी के विचार में शंकर का अद्वैत, रामानुज आदि की भक्ति और रामकृष्ण की सेवा के अलावा उत्पादन भी आता है। आपने रामकृष्ण और गांधीजी, दोनों का नाम लेकर कुल का कुल बोझ उठा लिया। हासिल करने की कोई चीज बाकी नहीं रही। अद्वैत-विचार, भक्ति-मार्ग, सेवा की दृष्टि और उत्पादक कर्म-योग; ये सब यहाँ अब इकट्ठे होंगे।

> भारतीय संस्कृति का यह आखिरी समन्वय है। इसमें भारत की कुल कमाई आ जाती है। जहाँ हम सेवा का नाम लेते हैं, वहाँ करुणा आ ही गयी। इसलिए बुद्ध भगवान् की करुणा का विचार भी उसमें आ गया। जहाँ अद्वैत का नाम आया, वहाँ अहिंसा आ ही जाती है। इसलिए महावीर की अहिंसा भी इसमें आ जाती है। यह तो पंचपक्वान्न का बड़ा मिष्टान्न बन गया। आपने जब इतनी बड़ी जिम्मेवारी उठायी है, तो आपको काम भी वैसा ही करना होगा।

भूदान एक बाहरी रूप है। भगवान् बुद्ध ने भी ऐसा ही काम उठा लिया था। उस जमाने में यज्ञ में बकरों की हिंसा होती थी। उस बलिदान से वे मुक्ति ही दिलाना चाहते थे। आज ईसाइयों, मुसलमानों और हिन्दुओं में भी बलिदान तो होता है, परंतु बकरों के बलिदान के खिलाफ बहुत बड़ी आवाज बुद्ध भगवान् ने उठायी। वे करुणा का विचार फैलाना चाहते थे। परंतु केवल व्याख्यान देकर और ग्रन्थ लिख कर प्रचार नहीं होता है। समाज में से निष्ठुर कार्य को हटाने के लिए कोई प्रत्यक्ष कार्य भी हाथ में लेना होता है। इसलिए बुद्ध भगवान् ने बकरों को बचाने का काम उठा लिया। बेचारा बकरा अभी तक बच नहीं पाया है, बुद्ध भगवान् बच गये हैं! उनके नाम से आज यहाँ उत्सव भी होता है। हमारी सरकार ने भी बुद्ध भगवान् के विचारों को स्वीकार किया है, सारे हिंदुस्तान ने स्वीकार किया है। इस तरह बुद्ध भगवान् तो बच गये, लेकिन उनकी कोशिश बकरे को बचाने की थी। उन्होंने बकरे को प्रतीक बनाया। लेकिन वे चाहते थे करुणा का प्रचार! उस जमाने में जो निष्ठुरता चलती थी, उस तरफ़ उन्होंने अँगुली-निर्देश कर दिया। जगह-जगह वे करुणा समझाते गये: "क्यों भाई, करुणा समझते हो? अगर समझते हो, तो लिख दो 'करुणा-दानपत्र' कि हम यज्ञ में बकरे का बलिदान नहीं करेंगे।" इस तरह दानपत्र हासिल करते वे चले गये। बकरे को बचाने की यह स्थूल बात दीखती है, लेकिन थी वह करुणा की ही बात! वैसे ही बाबा ने नाम दिया है, भूदान का, लेकिन वह चाहता है करुणा का विचार, मालकियत छोड़ने का विचार याने अद्वैत का विचार! अद्वैत और करुणा जहाँ इकट्ठी होती है, वहाँ भूदान आ जाता है। यह समन्वय है। जो समन्वय आप यहाँ करना चाहते हैं, वही भूदान-यज्ञ प्रत्यक्ष सेवाकार्य के रूप में करना चाहता है। विषमता के बहुत सारे प्रकार दुनिया में पड़े हैं। उनके कारण बहुत निष्ठुरता चलती है। अपने गाँव में ही, अड़ोस-पड़ोस में दरिद्र, गरीब, बेचारे लोग रहते हैं, पर उनकी कोई चिन्ता हम नहीं करते। बहुत हुआ तो भूखे को कभी एकाध दिन खिला देंगे या बीमार पड़ा, तो औषधि दे देंगे! परंतु वह बीमार क्यों पड़ता है, उसको खाने को क्यों नहीं मिलता है, इसके मूल कारण को वे दूर नहीं करेंगे, तो रोग बना रहेगा! मूल कारण यही है कि हमने भेद बढ़ाया, हमने मालकियत बनायी। इसी मालकियत और भेद पर हम प्रहार करना चाहते हैं। उसके वास्ते सिंबॉल (प्रतीक) के तौर पर हमने भूमि का मसला हाथ में लिया है। पौने छह साल से यह काम चल रहा है। जब तक यह कार्य बाकी रहेगा या जब तक बाबा के पाँव में ताकत रहेगी, तब तक यह जारी रहेगा।

अब तो बाबा ने, इस काम के लिए पहले जो भूदान-समितियाँ थीं, वे सब तोड़ डालीं। शुरू में उनकी जरूरत थी। उनके जरिये काम भी हुआ। लेकिन बच्चा छोटा था, तब उसको चम्मच से खिलाते थे। अब वह बड़ा हो गया, अब चम्मच से खिलाना बंद हो गया। अब लोगों को स्वयं यह काम उठा लेना चाहिए। कौन लोग यह काम उठा लेंगे? जिनके हृदय में आध्यात्मिक वृत्ति का उदय हुआ होगा, वे ही उठा लेंगे। जो आत्मा की एकता में मानते होंगे, जिनके हृदय में करुणा होगी, जो सेवा और कर्मक्षेत्र को महत्त्व देते होंगे, जो अद्वैत समझते होंगे, जिनको भक्ति प्रिय होगी, वे ही लोग इस काम को उठा सकते हैं। वे काम उठायेंगे और आगे बढ़ायेंगे।

कुछ कार्यकर्ता संस्था में काम करेंगे और कुछ बाहर घूमेंगे, इस तरह जगह पर गहरा काम और बाहर व्यापक प्रचार-कार्य चलेगा। दोनों प्रकार के काम चलेंगे, तभी विचार फैलेगा और दृढ़ होगा। अगर ऐसा नहीं करेंगे, तो शिक्षण-संस्था निस्तेज और वीर्यहीन बनेगी। चारों ओर जो विषमता फैली है, उसको हटाने का काम अगर शिक्षण-संस्थाएँ नहीं करेंगी, तो वे बेकार साबित होंगी। बंगाल में हमने कहा था कि रामकृष्ण ने 'समाधि' का व्यक्तिगत क्षेत्र में जो अनुभव किया था, उसी समाधि को समाज में फैलाने का काम हम कर रहे हैं। समाधि का अर्थ है, चित्त का समाधान। हम चाहते हैं कि कुल समाज के चित्त का समाधान हो। रामकृष्ण ने अपने अनुभव से दुनिया के सामने जो समाधि-विचार रखे, वह हम घर-घर फैलाना चाहते हैं। ऐसे महापुरुष के नाम से यह संस्था चलती है, जिस पर हमारी श्रद्धा पहले से बैठी है। हमको आज ऐसा भास हुआ कि मानों हम अपने गुरुभाइयों के पास आ पहुँचे हैं। हमने आपसे जो आशा रखी है, वह भगवद्-आदेश हम सबके लिए है।

(रामकृष्णकुडिल, त्रिची, १६-१-५७)

———

www.vinoba.in

भूदान-यज्ञ

१ फरवरी सन् १९५७

छीपी हुअी दौलत !

(वीनोबा)

हमकों बहुत से लोग भूदान का अुद्देश्य पूछत हैं, तो हम सभा में बैठी हुअी बहनों को ही पूछते हैं: "जैसे तुम्हारे घर में बच्चे हैं, वैसे भूमीहीनों के घर में भी हैं या नहीं ? अगर हैं, तो अुनका अच्छा पालन-पोषण होना चाहीअे या नहीं ? अगर अीश्वर की यह मर्जी होती की गरीबों के बच्चों का अच्छा पालन-पोषण न हो, तो अुनके घरों में बच्चे पैदा ही नहीं होते ! परंतु अुसने भूमीहीनों के घर में भी बाल-बच्चे दीये हैं। अीसके मानी हैं की अुनको भी ज़मीन मीलनी चाहीअे।" अीतना कहने से बहनें समझ जाती हैं और ग्रामदान देने को तैयार हो जाती हैं। हम गांव वालों को न चीन की राज्य-क्रांती समझाते हैं, न रूस की कहानी, न फ्रान्स की करांती। हम तो बच्चों की कहानी सुनाते हैं। तो, जैसे हवा, पानी और सूरज की रोशनी सबको समान चाहीअे, वैसे बच्चों को समान पोषण को लीअे जमीन भी सबको समान चाहीअे। परंतु आजकल शहर में हवा का भी दाम लगता है ! जीनके पास ज्यादा पैसा, अुनको ज्यादा हवा ! अेक खीड़कीवाले घर का पचास रुपया, तो दो खीड़कीवाले घर का सौ रुपया कीराया ! शहर की योजना अैसी की गरीब लोग वहां प्रवेश ही न पाये ! अुसे अेक स्वर्ग बना रखा है और गरीबों को अुस स्वर्ग में आने की मनाही है। अगर आना है, तो कुत्ते के समान रहो और दूसरे को दीये हुअे टुकड़े खाओ !

कथा है की कुत्ता स्वर्ग में प्रवेश करने लगा तो मना कीया गया। तब युधीष्ठीर ने कहा की जीस स्वर्ग में मेरे साथी कुत्ते को प्रवेश न हो, अुस स्वर्ग में जाना मुझे मंजूर नहीं है। अुन्होंने स्वर्ग जाने से अीन्कार कर दीया ! परंतु आज गरीबों की हालत अैसी है की शहर में जाये बीना अुनको चारा ही नहीं है, क्योंकी गांव के सारे धंधे शहर वालों के हाथ में है ! गांव में जी नहीं सकते और शहरों में कुत्ते का ही सही, लेकीन जीवन जी सकते हैं, अीसलीअे बेचारे गांव छोड़ कर चले आते हैं ! अब अुनके बच्चों की क्या हालत पूछते हो ! हमको सबसे ज्यादा चींता अगर कीसीकी होती है, तो अीन बच्चों की, क्योंकी वे बच्चे तो ढंका हुआ खजाना हैं। हम नहीं कह सकते की अुनमें से कौन बुद्ध, शंकराचार्य और रामानुज है ! यह तो छीपी हुअी दौलत है। अुनको अुत्तम पालन-पोषण मीलेगा, तो कीतने ही अुत्तम-अुत्तम रत्न हींदुस्तान में प्रकट होंगे। अीसलीअे भूदान का सबसे बड़ा अुद्देश्य यह है की गरीबों के बच्चों को अच्छी परवरीश का मौका मीले, जो की ग्रामदान द्वारा सहज मील सकता है।

त्रीचनापल्ली, १८-१-५७

सन् सत्तावन् का आह्वान !

सन् '५७ भारतीय इतिहास में एक क्रांतिकारी महत्त्व रखता है। यह स्वयं एक क्रांतिकारी वर्ष है। अंग्रेजी साम्राज्य के विरुद्ध क्रान्ति की आग पहले-पहल १८५७ में ही भड़की थी। अब १९५७ आया है ! तो इस '५७ में क्या होने वाला है ? कौन-सी क्रांति होगी अब भारत में, जब कि यह देश दस साल पूर्ण स्वतंत्र हो चुका है ?

वास्तव में, आज भारत में ही नहीं, बल्कि सारी दुनिया में क्रान्ति की आवश्यकता है—एक ऐसी अनोखी क्रांति की, जो पिछली सारी क्रांतियों से भिन्न हो और जो मानव-जीवन को जड़मूल से परिवर्तित कर दे। आज ऐसी एक क्रांति अनिवार्य हो उठी है, जो मानव को मानव बना दे। मानव आज मानव का शत्रु बना हुआ है, मानव आज मानव का शोषण कर रहा है। हर गाँव का, हर नगर का, हर देश का यही हाल है। अवस्था ऐसी बिगड़ चुकी है, मानव-मानव का पारस्परिक द्वन्द्व इतना बढ़ चुका है कि अब आणविक अस्त्रों के द्वारा सारे मानव-समाज के नष्ट हो जाने का खतरा उपस्थित हो गया है। इसलिए मानव-समाज की रक्षा और उसकी उन्नति के लिए आज प्रेम की क्रांति परमावश्यक हो गयी है। जमाना हमें चेतावनी दे रहा है कि "आदमी बनो, एक दूसरे से प्रेम करो, मिल कर रहो; नहीं तो तुम्हारा सर्वनाश हो जायगा। आपस में तुम झगड़ोगे, तो पछताओगे। मिल कर रहोगे, तो सुख-शांति प्राप्त करोगे; समाज में धर्म और नीति का उदय होगा, मानव-इतिहास में एक नया युग शुरू होगा !"

इसी प्रेम-क्रांति का मंगल उपदेश विनोबा आज साढ़े पाँच वर्षों से गाँव-गाँव घूम कर हमें समझा रहे हैं। आज से ढाई हजार वर्ष पूर्व भगवान् बुद्ध ने भी इसी प्रकार गाँव-गाँव घूम कर प्रेम का सन्देशा मानव को दिया था। आज दुनिया को बुद्ध के सन्देश की सबसे अधिक आवश्यकता है। लेकिन उसकी पूर्ति आज बुद्ध-जयन्ती के भड़कदार उत्सवों से नहीं, विनोबा के मंगलमय उपदेशों से हो रही है।

संत विनोबा हमें समझा रहे हैं कि सारा मानव-समाज एक परिवार है और जैसे आज अपने छोटे-छोटे परिवारों में हम बाँट कर खाते हैं, उसी प्रकार समाज में—याने गाँव-गाँव में, नगर-नगर में, राज्य-राज्य में, देश-देश में—हमें बाँट कर खाना चाहिए। सब मिलकर पैदा करें और आपस में बाँट कर खायें—तब सभी सुखी होंगे, सर्वत्र शांति होगी, धर्म का राज्य होगा, मानव-जीवन सफल होगा, विश्व-मंगल और विश्व-शांति होगी। 'हमारे-तुम्हारे' का झगड़ा भूल जायेंगे, रोटी के टुकड़ों के लिए, मालकियत के लिए आपस में लड़ना छोड़ देंगे, तो सबका पेट भरेगा, सबके साथ न्याय होगा, प्रेम की हवा घर-घर में बहेगी !

आज हमारा जितना पतन हो चुका है, जितना स्वार्थ, मोह, लोभ हमें ग्रस चुका है, उसका ध्यान करके हमें लगता है कि वैसा प्रेम का जीवन हमारे लिए असाध्य है, असम्भव है। परन्तु उस महान् लक्ष्य तक पहुँचने के लिए विनोबाजी ने ऐसी सुगम सीढ़ियाँ बतायी हैं, जिन पर चढ़ कर हम सहज ही सर्वोदय के उच्च शिखर पर पहुँच सकते हैं। वे महात्मा हमें समझा रहे हैं कि पहले हम सब थोड़ा-थोड़ा त्याग करें, एक सीढ़ी ऊपर चढ़ें—भूदान करें, सम्पत्तिदान करें। अगर सब लोग एक सीढ़ी चढ़ जायें, तो सारा समाज उतना ऊपर उठ जायेगा। उसके बाद हम दूसरी सीढ़ी चढ़ेंगे। फिर तीसरी। अन्त में सब लोग सर्वोदय के शिखर पर पहुँच सकेंगे—लूले भी, लँगड़े भी। तो सन् '५७ में हमें इसी पहली सीढ़ी की चढ़ाई समाप्त करनी है। प्रेम-क्रांति का यह पहला चरण सन् '५७ में पूरा होगा। इसी क्रांति की चर्चा आज हवा में फैली-हुई है और यही क्रांति आपको करनी है। गाँव-गाँव में जमीन का बँटवारा हो, भूदान हो। किसी गाँव में कोई भूमिहीन न रह जाय। धरती माता के सभी बच्चों को माता की गोद में स्थान मिले। भूमि की सेवा करने वाले हर परिवार को कम से कम गुजारे भर के लिए जमीन प्राप्त हो जाय। गाँव-गाँव में प्रेम का उदय हो, प्रेम का बँटवारा हो, प्रेम की क्रांति हो। सन् '५७ के अन्त तक हमारे देश में कोई भूमिसेवक भूमिहीन न रहे।

तो भाइयो, आप यह संकल्प करें कि आपके गाँव में भूमिहीन कोई न रहेगा। आप ऐसा न समझें कि भूदान-यज्ञ का कोई 'कार्यकर्ता' आपके गाँव में जाकर जमीन का बँटवारा करेगा। कार्यकर्ता तो आप स्वयं हैं। यह अपका आपना काम है, आपकी अपनी जिम्मेदारी है। यह आपका अपना धर्म और कर्तव्य है।

अतः आपसे अनुरोध है कि गाँव-गाँव में आप छोटे-बड़े सभी भूमि-मालिक आपस में मिल कर अपने भूमिहीन भाइयों को प्रेमपूर्वक गुजारे के लायक जमीन दे दें और ऐसा प्रबंध करें कि सन् '५७ के अन्त तक जमीन पर मेहनत करने वाला एक भी परिवार भूमिहीन न रह जाय। ईश्वर आपका मंगल करे !

सर्वोदय-आश्रम, पो० सोखोदेवरा (गया) —जयप्रकाश नारायण

www.vinoba.in

इस तरह अपने को मत ठगिये !

(विनोबा)

एक बहुत बड़ी ग़लतफ़हमी हिंदुस्तान के मानसिक विचार में है। वे समझते हैं, जो सुख-दुख भोगना पड़ता है, वह पूर्वजन्म के कर्मों का फल है; इसलिए अपना-अपना नसीब सब भोग लें। इस विचार में ही गलती है। हर मनुष्य का नसीब अलग-अलग होता है, इसमें कोई शक नहीं है, लेकिन कुछ नसीब समान भी होते हैं ! हम एक गाँव में जन्म पाते हैं, क्योंकि हमारा कुछ नसीब समान है ! हम एक ही मनुष्य-जाति में जन्म पाते हैं, क्योंकि हमारा कुछ नसीब समान है। तो, नसीब जो बनता है, वह केवल व्यक्तिगत नहीं बनता है। नसीब याने पूर्वकर्म। जो हमने पहले ही कर दिया है, वह हमारा भाग्य है। परंतु दुनिया में हम देखते हैं कि बहुत से काम हम अकेले-अकेले नहीं करते हैं, मिल कर करते हैं। सेना लड़ी, तो लाख-लाख मनुष्यों ने मिल कर वह काम किया। किसी घर को आग लगी, तो ५० लोगों ने मिल कर वह बुझायी। व्यापार करते हैं, तो कुछ लोग मिल कर करते हैं। परिवार में भी अनेक लोग इकट्ठा हो कर काम करते हैं। इसलिए हर काम अलग-अलग ही हैं, सो बात नहीं। कुछ काम ऐसे हैं भी, परंतु बहुत से काम वैसे ही हैं, जो मिलजुल कर होते हैं। हम सबने मिल-जुल कर खेत में काम किया और सब लोगों ने मिल कर एक घर में खाना पकाया, तो कमाने का और पकाने का, ये दोनों काम सामूहिक रीति से हुए। कमाने में जो अच्छाइयाँ और बुराइयाँ होंगी, वे सब लोगों की मानी जायेंगी। जो रसोई बनायी, वह भी सब लोगों को पूछ कर तय करके बनायी। तो कमाई और रसोई, ये दोनों काम सामूहिक हुए। परंतु खाने का काम हम अलग-अलग करते हैं। मेरा भाई ठीक खाता है, मैं ज़रूरत से ज्यादा। तो यह मैंने व्यक्तिगत कार्य कर लिया, तो परिणाम मुझे मिला। मेरा पेट दुखा, मेरे भाई का नहीं। इस तरह दुनिया में बहुत से कार्य हम मिल कर करते हैं और बहुत थोड़े व्यक्तिगत होते हैं, जैसे मेरा खाना मैं खाता हूँ, मेरी नींद मैं लेता हूँ, मेरा स्नान मैं करता हूँ। इसलिए हमारे बीते जन्म के काम भी बहुतों के समान हैं और इसलिए बहुतों के नसीब भी समान हैं। हम एक गाँव में जन्म पाते हैं, तो लोगों को हमें समझाना चाहिए कि हम सब गाँववालों का कुछ नसीब एक-सा है, नहीं तो एक ही मानव-जन्म में एक ही परिस्थिति में, एक ही काल में एक ही योनी में हम क्यों जनमते ? साफ है कि हम सबका पहले कुछ सामूहिक नसीब था। इसलिए "सबका अलग-अलग नसीब है, तो हम दूसरों का क्यों सोचें", यह खयाल ही गलत है। इसीलिए अगर अपने भाई को हम मदद नहीं करते हैं, तो उसके माने हैं कि उसने ज्यादा खा कर बुरा काम तो किया ही, लेकिन हम उसको मदद नहीं करते हैं, तो यह उससे भी ज्यादा बुरा काम हम कर लेते हैं। यही मेरा व्यक्तिगत बुरा काम हो गया। उसका तो पेट दुखना खत्म हो गया याने अगले जन्म में भुगतने का कुछ बाकी नहीं रहा। लेकिन मैंने जो मदद न करने का बुरा काम किया, मेरे भाई के प्रति सहानभूति नहीं रखी, उसका फल दूसरे जन्म में मुझे भुगतना ही पड़ेगा। इस तरह आप जब एक गाँव में रहते हैं और अपने घरों में सुखी हैं, पर आपके पड़ोस में एक दुःखी है, जिसकी ओर आप सहानुभूति नहीं रखते हैं, तो यह अपना व्यक्तिगत बुरा काम हो गया, जिसका फल आपको ही भुगतना पड़ेगा। उसने पिछले जन्म में जो बुरे काम किये और परिणामस्वरूप जो दुःख वह भुगत रहा है, वह तो पुरानी बात हो गयी; परंतु आप अगर उसके दुःख में सहानुभूति नहीं रखते हैं, तो आपका यह नया बुरा कार्य हो गया !

इसलिए हिंदुस्तान में यह जो विचार है कि सबका अलग-अलग नसीब है, इसलिए सब अपना-अपना भुगत लें, यह बहुत ही निष्ठुर विचार है। इस प्रकार का विचार क्या आप अपने भाई, बहन, माता, पिता, पत्नी और बच्चों के लिए करते हैं ? कहाँ की आपकी पत्नी ? कोई संबंध था पहले उससे आपका ? पर उस पर कितना प्यार करते हैं ? उसके सुख के लिए कितनी कोशिश करते हो ? बिलकुल एकरूप होकर रहते हो। उस समय यह नहीं कहते कि उसका और हमारा नसीब अलग है, तो अपना-अपना देख लें ! फिर गाँव के ही पड़ोसी के लिए वैसा क्यों सोचते हो ? यह बिलकुल ही विचारहीनता है। वह जो ज्यादा खाता है, वह भी अकेले का काम है; यों मत समझो। मान लीजिये कि हम खाने को बैठे हैं। परोसने वाला आग्रह करता है कि ज्यादा खाना खाइये ! पहले तो हम इन्कार करते हैं, परंतु उसके आग्रह के वश होकर हम ज्यादा खा लेते हैं। फिर पेट दुखता है और दो दिन के बाद मर जाते हैं, तो मुझे तो अपनी गलती का फल मिल गया, परंतु जिन्होंने प्रेमपूर्वक खिलाया, उनका भी क्या मेरे मृत्यु में हाथ नहीं है ?

इसलिए जो व्यक्तिगत गलती मानी जाती है, उसमें भी दूसरे की गलती होती है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। उसके बहुत से काम सामूहिक ही होते हैं। जो व्यक्तिगत हिस्सा होता है, वह शारीरिक और मानसिक ही होता है। वस्तुस्थिति ऐसी है कि मनुष्य-हृदय को निष्ठुरता सहन नहीं होती है। अपने पड़ोसी के लिए वह निष्ठुर बन तो रहा है, लेकिन उसके हृदय को वह चुभता है। फिर अपने दिल के समाधान के लिए 'पुराने जन्म के कर्म की भावना' के रूप में समाधान कर लेता है। यह अपने को ठगने की ही बात है। इधर जब बात करते हैं, तो अद्वैत से कम बात बोलते ही नहीं। मनुष्य, प्राणी, पत्थर, पेड़, पानी आदि सब एक मानते हैं। बोलने में तो इतना बोल दिया कि इससे ज्यादा कोई तत्त्वज्ञान बोल ही नहीं सकता। पर उसे जीवन में लाने की बात ही नहीं है; बल्कि लोगों का यहाँ तक खयाल हो गया कि हम पाप करते रहें और धर्म-ग्रंथों का पाठ कर लिया, तो पापों से मुक्त हो जायेंगे ! पाप से मुक्ति पाने के लिए पुण्यवान् जिंदगी बनाने की जिम्मेवारी हमें जैसे उठानी ही नहीं है ! दो आने की 'भगवद्गीता' अपने घर में रख ली, तो पुण्यमार्ग हो गया ! इस तरह अपनें को ठगने के कई उपाय मनुष्य ने ढूँढ़े ! सचमुच में धर्म अगर बढ़ता होता, तो सुख भी बढ़े बिना नहीं रहता। जहाँ धर्म बढ़ता है, वहाँ दुःख हो ही नहीं सकता, क्योंकि धर्म में एक-दूसरे के लिए मर मिटते हैं। जहाँ एक-दूसरे के लिए इतना प्यार हो, एक-दूसरे के लिए मर मिटने के लिए तैयार हों, वहाँ दुःख का दर्शन ही नहीं होगा। इसलिए समझना चाहिए कि धर्म का तो सिर्फ हमारा नाम है। वास्तव में आचरण में आज धर्म है नहीं।

(कुप्पचीपेट्टी, त्रिची, १४-१-५७)

'करने' और 'होने' की चीजें !

'''समन्वय ही आश्रम है, जिसमें सब अच्छे विचारों को आश्रय मिलता है। उसका भी हमने आश्रम खोला, तो सब अच्छे विचारवालों को आश्रय मिलेगा। आश्रय स्थायी या अस्थायी, यह कोई सवाल नहीं। दोनों बराबर ही हैं। बौद्ध-विचार में तो दोनों क्षणिक हैं। खैर, क्षण की लंबाई बढ़ा सकते हो, घटा सकते हो, मिटा भी सकते हो। बढ़ाने वाले हम होंगे, घटाने वाली प्रकृति होगी, मिटाने वाला ईश्वर होगा—चाहे उसे कोई माने न माने। वह अपना काम करता ही चला जायेगा।

ध्यान-योग और कर्म-योग की प्रक्रियाओं को जोड़ने वाली कड़ी शुचित्व ही है, जिसका स्थूल रूप है, स्वच्छता और सूक्ष्म रूप है, भक्ति। आसपास की चीजों को व्यवस्थित ढंग से रखना और स्थान की स्वच्छता का पूरा खयाल रखना न सिर्फ ध्यानयोग के लिए अनुकूल है, बल्कि वह स्वयं ही ध्यान है। "गीताई" में राजस कर्ता के लक्षण में, लोभी, अस्वच्छ, हिंसक, ऐसे तीन पद आये हैं। कर्मयोग में जहाँ बाह्य कर्म का लोभ पैदा होता है, वहाँ अस्वच्छता और हिंसा, दोनों हुआ करते हैं। परिणाम में कर्म को भी क्षति पहुँचती है और कर्ता को भी। समन्वय-आश्रम की हर चीज़ फलानी जगह रखी है, तो क्यों रखी है, इसका उत्तर हमारे पास होना चाहिए। फलानी जगह 'पड़ी' है, ऐसा तो होना ही नहीं चाहिए। 'रखी' है, ऐसा ही होना चाहिए। दूर बैठे-बैठे मेरे मन में ऐसे विचार आते हैं। 'ध्यान' "करने" की चीज नहीं होनी चाहिए। 'करने' की चीजें कर्म, स्वच्छता, सुव्यवस्था ही हो सकती हैं। ध्यान तो किये बिना 'हो सकना' चाहिए। अब बरसों से भूदान-यात्रा हमारी चल रही है, तो उसके लिए क्या मुझे ध्यान करना पड़ता है ? यात्रा की अखंडता ही स्वयमेव ध्यान है, ऐसा महसूस करता हूँ। अपने आश्रम में साधक ब्रह्मचर्य की साधना करते हैं। वह भी इसी प्रक्रिया से सुलभ हो सकती है।

अक्सर मैं बहुत ज्यादा लिखता नहीं, क्योंकि हर एक का स्वतंत्र बुद्धि-विकास चाहता हूँ। थोड़ा लिख देता हूँ, जिससे कि सूचन-मात्र हो जाय।

कोट्टमूपट्टी, ८-१-५७

—विनोबा के प्रणाम*

---

*समन्वय-आश्रम, बोधगया के अधिष्ठाता श्री सुरेंद्रजी के नाम लिखे पत्र से।

www.vinoba.in

सर्व-सेवा-संघ का चुनाव-प्रस्ताव

(दादा धर्माधिकारी)

(पिछले अंक से समाप्त)

लेकिन सर्व-सेवा-संघ सर्वोदय का कोई ठेकेदार नहीं है। और यह कोई शंकराचार्य का पीठ भी नहीं है कि यहाँ से कोई व्यवस्था सर्वोदय के बारे में दी जायगी और लोग उसको मानेंगे! अगर लोग इसको इस तरह से मानने लगेंगे और ऐसा हो जायगा, तो इस संस्था की उपयोगिता भी समाप्त हो जायगी और उसका जीवन भी समाप्त हो जायगा। नम्रतापूर्वक हमको यही मान लेना चाहिए कि सर्व-सेवा-संघ के अलावा और सर्व-सेवा-संघ में भी ऐसे व्यक्ति हो सकते हैं, जो यह मानते हैं कि सत्ता की राजनीति का उपयोग हम जिस सिद्धान्तों को दुनिया में चरितार्थ करना चाहते हैं, उनको चरितार्थ कराने के लिए हो सकता है। उदाहरण के लिए दादा कृपालानी हैं। दादा कृपालानी को हमने सर्वोदय-विचार की दृष्टि से और गांधी-विचार की दृष्टि से सर्व-सेवा-संघ के किसी भी व्यक्ति से कम नहीं माना है और विनोबा से भी किसी प्रकार कम नहीं, बल्कि बराबरी का माना है। ढेबरभाई हमारे बीच कभी-कभी आकर भूदान का काम करते हैं। वह भी गांधी और सर्वोदय के विचार को मानने वाले हैं। जयप्रकाश बाबू स्वयं यहाँ हैं ही। तो आज की परिस्थिति में सत्ता की राजनीति की तरफ से बिलकुल उदासीन रहना, तटस्थ रहना हमारे लिए वांछनीय नहीं होगा, ऐसा विचार कुछ लोगों का हो सकता है—जो उतने ही निष्ठावान् सर्वोदय-निष्ठ व्यक्ति हैं, बल्कि हम लोगों से अधिक निष्ठावान् हैं। सर्व-सेवा-संघ का ध्यान इस तरफ भी है, इसलिए प्रस्ताव के दूसरे हिस्से में यह कहा गया कि ऐसे व्यक्ति वोट देंगे और वोट देना अपना कर्तव्य मानेंगे। फिर भी सर्व-सेवा-संघ ने उनकी तरफ से नम्रतापूर्वक यह अपेक्षा की है कि जिन लोगों का अहिंसक साधनों के लिए आग्रह नहीं है, ऐसे व्यक्तियों का वहाँ जाना वे पसन्द नहीं करेंगे। जनतन्त्र के लिए नागरिक निरुपाधिक होना चाहिए। निरुपाधिक से मेरा मतलब यह है कि उसके पीछे जाति, धर्म या इस प्रकार का कोई एक विशेषण या उपाधि नहीं होनी चाहिए। यह विचार सर्व-सेवा-संघ के दिल में है, इसलिए उसने यह भी जोड़ दिया है कि जो सम्प्रदायवादी होंगे, उनके लिए भी वह अपना वोट खर्च नहीं करेगा और अन्त में उसने यह भी कह दिया है कि आखिर में हमको पक्षनिष्ठा की तरफ से लोकनिष्ठा की तरफ जाना है, तो हम यह भी आशा करते हैं कि पक्ष अगर किसी गलत आदमी को खड़ा कर दे, तो हम पक्षनिष्ठ हैं, इस वजह से उस आदमी को अपना वोट न दें। पक्षनिष्ठा से लोकनिष्ठा की तरफ यह एक कदम आगे बढ़ने की तरह है, ऐसा सर्व-सेवा-संघ सोचता है।

जिस समय और जिस परिस्थिति में पक्षों का निर्माण हुआ और ये पक्ष बने-इंग्लैंड में और अमेरिका में-वह परिस्थिति और जिसे वह संदर्भ या 'कॉंटेक्स्ट' कहते हैं, वह आज की दुनिया में कहीं नहीं है। इसलिए वहाँ भी अब एक विचार पेश हुआ। अपनी आत्मा, अपनी 'कांस्टीच्यूएन्सी' याने अपना निर्वाचन-क्षेत्र और अपनी पार्टी, इन तीन निष्ठाओं में से कौनसी निष्ठा का पार्लमेंट का सदस्य अंत में पालन करे? किसको वह सरल, श्रेष्ठ माने? क्या अपने निर्वाचन-क्षेत्र को माने? तो वह मेंबर एक निर्वाचन-क्षेत्र का हो सकता है, लेकिन पार्लमेंट में जाने के बाद तो वह पूरी इंग्लिश पार्लमेंट का मेंबर बन जाता है। फिर वह किसी एक क्षेत्र का प्रतिनिधि नहीं रह जाता। अपनी पार्टी को श्रेष्ठ माने, तो पार्टियों के सिद्धांत जितने पहले स्पष्ट थे, उतने स्पष्ट नहीं रह गये हैं। पार्टियों के सिद्धांत और कार्यक्रम अब एक-दूसरों से मिलते-जुलते हैं। अगर जुड़वा भाई नहीं, तो सौतेले भाई वे जरूर मालूम होते हैं। उनमें एक तरह का कौटुम्बिक साधर्म्य-सा आ गया है—इंग्लैंड में, अमेरिका में, और भारतवर्ष में भी। यह परिस्थिति आज के पक्ष-भेदों की है। साधन-निष्ठा में भी उतना अंतर अब नहीं रह गया है, जितना पहले था। इन सारी बातों का विचार करते हुए दुनिया भर में जितने लोकसत्तावादी हैं, वे अब इस समस्या का विचार कर रहे हैं कि आगे चल कर लोकसत्ता का और लोकतंत्र का स्वरूप क्या होगा। इसलिए सर्व-सेवा-संघ ने एक बहुत छोटा-सा संकेत प्रस्ताव में किया है। असल में यह जो संकेत किया गया है, उसका सारा श्रेय एक तरह से जयप्रकाश बाबू को है। उन्होंने अपनी प्रजा-समाजवादी-पार्टी से कहा कि मुझसे लोग पूछते हैं कि तुम वोट किसको दोगे? तो उन्होंने कहा कि मैं प्रजा-समाजवादी पार्टी के उम्मीदवार को वोट दूँगा। लेकिन प्रजा-समाजवादी पार्टी का उम्मीदवार अगर ऐसा हो कि जिसे मैं उपयुक्त नहीं समझता, तो मैं उसको वोट नहीं दूँगा, वह पार्टी का उम्मीदवार भले ही हो। इसको हम पक्ष-निष्ठा से लोकनिष्ठा की तरफ एक अगला कदम मानते हैं। इसलिए इस प्रस्ताव में ऐसा उल्लेख कर दिया गया है। पहले हिस्से में सिर्फ सर्व-सेवा-संघ ने अपनी नीति स्पष्ट की है कि हमारी नीति बहिष्कार की नहीं है, असहयोग की नहीं है, सावधान, जागरूक, भाव-रूप और तटस्थता की है। वह भी क्यों है? आज जिस तरह का लोकतंत्र बना हुआ है, वह स्पर्धा के सिद्धांत पर चलता है, स्पर्धा के तत्त्व पर चलता है। आर्थिक क्षेत्र में से हम स्पर्धा को हटा देना चाहते हैं। राजनैतिक क्षेत्र में जो लोकतंत्र होगा, उसमें भी अब स्पर्धा नहीं रहनी चाहिए। प्रस्ताव के दूसरे हिस्से में उन लोगों के लिए कहा गया है कि जो अहिंसा को मानते हैं, अहिंसक समाज-रचना को मानते हैं, सर्वोदय के सिद्धांतों को भी मानते हैं, फिर भी नागरिक के नाते वोट देना अपना कर्तव्य मानते हैं। मैं मानता हूँ कि इतना स्पष्टीकरण पर्याप्त होगा।

(१९-११-'५६ पत्नी)

क्रान्तियज्ञ में छात्र

१९३० में मैं नमक-कानून तोड़ने पड़रौना जा रहा था। उस पदयात्रा में "धूसी बसनपुर" नामक गाँव में संध्या का पड़ाव था। रात्रि के भोजन के उपरान्त कुछ छात्र मेरे पास आये और उन्होंने कहा—"हमें इजाज़त दीजिये कि हम हाटा तहसील में नमक-कानून तोड़ें।"—इसलिए कि हाटा तहसील में कार्यकर्ता नमक बनाने की जोखिम उठाने के लिए तैयार नहीं थे। मैंने कहा: "आपकी उम्र १८ वर्ष से नीचे है, इसलिए हम वैसा आदेश देने में असमर्थ हैं।" वे बोले, "ठीक है, पर जब तक कार्यकर्ता तैयार नहीं होते, तब तक हम अपनी जिम्मेवारी पर नमक कानून तोड़ेंगे, क्योंकि हम नहीं चाहते कि हमारी तहसील किसीसे पीछे रहे।" और सचमुच उन्होंने मेरी गिरफ़्तारी के बाद कुछ दिनों तक नमक-कानून तोड़ा। इसी तरह उसी विद्यालय के एक तेरह वर्षीय छात्र श्री रामचन्द्र १९४२ में राष्ट्रीय झण्डे की इज्जत के लिए खुशी-खुशी गोली के शिकार हुए, और अमर शहीद बन गये। ऐसी कई घटनाएँ हैं, जो बापूजी के आन्दोलनों में देखने-सुनने को मिलीं।

आज विनोबाजी के क्रान्तिकारी भूदान-यज्ञ में भी छोटे-छोटे छात्र फिर से इसकी झाँकी हमें दिखा रहे हैं। हमने देखा था-छोटे-छोटे छात्र-छात्राओं को भूमिदान का अभिनय करते हुए, गीत गाते हुए। और बच्चों ने ही अपने घरवालों से कह कर भूमिदान भी दिलवाया था। छिंदवाड़ा जिले में बारह से अठारह वर्ष की आयु के ९० छात्रों ने, जिनमें हिन्दू-मुसलमान और सिक्ख भी थे, अपनी सात दिन की पदयात्रा में २५० एकड़ जमीन प्राप्त की। बालकों ने और भी काम किया। छोटे-छोटे बच्चों का यह पावन कार्य हमें इस बात की प्रेरणा देता है कि भूदान-यज्ञ का कार्य सम्पन्न करने में हमारे छात्र-छात्राएँ भी सफलतापूर्वक हाथ बंटायेंगे। उत्तर प्रदेश में ऐसे छात्रों की संख्या कम न होगी कि जो 'सत्-आवन' के शुभागमन पर सुमति माँ का स्वागत करने में सहायक होकर इस भूदान-यज्ञ के कार्य में हाथ बँटा कर काल-पुरुष की माँग की पूर्ति करें।

अभी हमको श्री धीरेन्द्रभाई द्वारा संचालित खादीग्राम (बिहार) का शुभ संवाद मिला कि २६ फरवरी से खादीग्राम संस्था एक वर्ष के लिए बन्द होगी। उसके पाँच-पाँच साल के बालवाड़ी के छात्र और सभी कार्यकर्ता भूदान-यज्ञ-टोली में सम्मिलित होंगे एवं भूदान, सम्पत्ति-दान मागेंगे। क्या दूसरी संस्थाएं भी इसका अनुकरण करना पसन्द नहीं करेंगी?

—(बाबा) राघवदास

प्रश्न: आपने कहा था कि गांधीजी के जमाने के सत्याग्रह का स्वरूप निगेटिव (अभावात्मक) था। इसके बारे में और समझाइये।

विनोबाजी: गांधीजी ने ऐसी इच्छा नहीं रखी थी कि वह सत्याग्रह निगेटिव बने, फिर भी वह वैसा बना। उनके मन में पॉजिटिव (भावात्मक) चीज थी, इसी-लिए खादी, ग्रामोद्योग, नयी तालीम आदि कई बातें उन्होंने उसके साथ जोड़ीं। लेकिन लोगों के मन में सिर्फ अंग्रेजों को हटाने की बात ही थी, इसलिए उसे निगेटिव रूप आया। गांधीजी अंग्रेजी हुकूमत के बारे में end or mend (सुधारो या खतम करो) कहते थे। परन्तु गाँव-गाँव में पड़े हुए भूमिमालिकों से हम end or mend नहीं कह सकते हैं। हमें mend ही करना है। उन सबका परिवर्तन करना ही हमारा औजार होगा, इसलिए जिस गहराई में उनका सत्याग्रह गया था, उससे अधिक गहराई में हमें जाना चाहिए।

---

www.vinoba.in

विनोद की घड़ियों में

(श्रीकृष्णदत्त भट्ट)

"कब का मर गया होता मैं, अगर मेरे जीवन में विनोद न होता।"– बापू की यह उक्ति विनोबा पर भी हूबहू लागू होती है।

बाबा का विनोद अक्सर चलता रहता है। सुबह-शाम, दिन-दोपहर।

उनकी मुस्कराहट, उनका अट्टहास देखते ही बनता है।

जब कभी वे विनोद करते हैं, तो उनकी आँखें हास्य से भर उठती हैं, चेहरा खिल उठता है और जो भी देखता है, प्रसन्न हुए बिना नहीं रहता।

शुद्ध, प्रसन्न, मस्ती-भरा विनोद।

\+ + +

गाँव आ रहा है। स्वागतार्थी आ रहे हैं। उनके आगे-आगे ढोलवाले हैं, बाजेवाले हैं।

बाबा बाजेवाले के पास पहुँचते हैं और उसका ढोल खींच कर अपने गले में डाल लेते हैं। इतना ही नहीं, वे ढोल पीटने भी लगते हैं।

\+ + +

एक दिन रास्ते में स्वागतार्थी भीड़ जुटी थी गोलाकार। बीच में कीर्तन चल रहा था।

बाबा पहुँचे और छीन ली पास में खड़े एक व्यक्ति से लाठी और लाठी लेकर आप विनोद में लाठीवाले को ही धमकाने लगे!

उसके बाद कीर्तन का प्रसंग लेकर उन्होंने छेड़ दिया, भूदान का प्रसंग। ग्राम को परिवार बनाने का प्रसंग। मिल-जुल कर एक साथ रहने का प्रसंग।

\+ + +

कुजेन्द्री में एक दिन कुछ भाइयों ने शाम को प्रार्थना-सभा के बाद बाबा से फ़रमाइश की गाने की। प्रवचन उस दिन पहले ही हो चुका था। बाबा ने बड़ी मस्ती से शुरू कर दिया शंकराचार्य का 'अच्युताष्टक'।

"अच्युतं केशवं राम नारायणं
कृष्ण दामोदरं वासुदेवं हरिम्
श्रीधरं माधवं गोपिका-वल्लभं
जानकी-नायकं रामचन्द्रं भजे।
अच्युतं केशवं सत्यभामाधवं
माधवं श्रीधरं राधिकाराधितम्
इन्दिरामन्दिरं चेतसा सुन्दरं
देवकीनन्दनं नन्दजं संदधे।…"

मैंने कहा : "बाबा गा रहे हैं।"

सिद्धराज भाई बोले : "गाने की कौन कहे, मैंने तो बाबा को मस्त हो, नाचते भी देखा है!"

\+ + +

रास्ता चलते बाबा का विनोद चलता है।

खाते-पीते बाबा का विनोद चलता है।

अन्तेवासियों से बात करते बाबा का विनोद चलता है। बाहर से मिलने के लिए आने वालों के साथ बाबा का विनोद चलता है।

और तो और, प्रार्थना-प्रवचन तक में कभी-कभी बाबा का विनोद चलता है। विनोद के सहारे वे अपनी बात ऐसी खूबी से जनता के हृदय में बैठा देते हैं कि कुछ न पूछिये।

\+ + +

१४ सितम्बर '५५

पद्मपुर : कोरापुट : उड़ीसा।

"क्यों भाई, इस गाँव का नाम क्या है?"

"पद्मपुर।"

"तो पद्मपुर में 'पद्मविभूषण' कौन बनेगा?"

और बहुत-से हाथ उठ गये।

न सुना हो, उन लोगों ने सरकार की 'पद्मविभूषण' उपाधि का नाम, पर बाबा कहते हैं, तो ज़रूर कोई चीज़ होगी बनने लायक़।

प्रातः पड़ाव पर पहुँचते ही बाबा ने स्वागतार्थ जुटी भीड़ से भूदान देकर 'पद्मविभूषण' बनने की माँग की।

और सचमुच कितने ही 'भूदान-पद्मविभूषण' बने उस दिन!

\+ + +

६ मार्च '५६

माधवरावपल्ली, हैदराबाद।

पं० जवाहरलाल मिलने आ रहे थे। यह सोच बाबा ने शाम की प्रार्थना-सभा का प्रोग्राम बदल कर सुबह का कर दिया।

सोचा, पड़ाव पर पहुँचने के बाद ही प्रार्थना-सभा हो जायगी। तो आसपास की जनता चली जायगी और तब शाम को भारत के प्रधान मंत्री से शान्तिपूर्वक गंभीर चर्चा की जा सकेगी, एकान्त में।

पर सवेरे की प्रार्थना-सभा से जनता का जी न भरा।

वह उत्तरोत्तर उमड़ती ही चली आयी।

तब दोपहर में फिर सभा का आयोजन किया गया।

बाबा तो मूसलधार वर्षा में लोगों से कहते हैं : "छाते समेट लो, भगवान् हजार हाथों से तुम पर प्रेम-वर्षा करते हैं और तुम छाता लगा कर उनके पावन स्पर्श से वंचित रहते हो! बन्द कर दो छाते।"

और उस दिन तो वर्षा नहीं हो रही थी, सिर्फ धूप थी।

कड़ाके की धूप।

ऐसी धूप कि चील अण्डा छोड़े!

नीचे बालू तप रही थी, चट्टानें तप रही थीं। ऊपर भगवान् भास्कर तप रहे थे।

खुले मैदान में खड़े लोगों में जिनके पास छाते थे, उन्होंने छाते खोल लिये।

बाबा बोले : "छाते समेट लो। इतनी कड़ी धूप में भी बड़े-बड़े पेड़ बिलकुल हरे-भरे हैं। नीचे से पानी और ऊपर से सुन्दर धूप हों, तभी पेड़ सुन्दर बनते हैं। इसी तरह हमारा जीवन हरा-भरा होने के लिए दो बातों की आवश्यकता है। एक, जिस तरह पेड़ धूप में तपते हैं, उस तरह बाहर से हमें खूब तपना चाहिए; और दो, पेड़ों के नीचे पानी होता है, वैसे ही हमारा हृदय प्रेम और भक्ति से खूब भरा हुआ होना चाहिए। इस तरह जब हृदय के अन्दर भक्ति का स्रोत बहता है और बाहर से तपश्चर्या होती है, तब जिन्दगी हरी-भरी होती है।

"प्रेम की ठंडक और मेहनत की गरमी, दोनों इकट्ठी हों, तो फिर जीवन में आनन्द-ही-आनन्द रहता है। फिर तो सूरज की यह धूप भी ठंडी हो जायगी और चाँदनी बन जायगी। अभी आप सब इतनी धूप में प्रेम से बैठे हैं, तो क्या आपको गरमी मालूम होती है? जिन्हें लगता है कि यह चाँदनी है, वे हाथ उठायें……।"

हज़ारों हाथ एक साथ ऊपर उठ गये।

देखते-देखते वह तेज धूप चाँदनी बन गयी।

दिन के बारह बजे खिली उस चाँदनी में हम सब लोग शराबोर हो गये!

(क्रमशः)

पदयात्रा-सत्र मनायें

भूदान-यज्ञ की विशेषता पदयात्राओं में है। भारतीय परिव्राजकों का, प्राचीन आचार्यों का एवं उनके कामों का स्मरण होते ही बड़ा बल मिलता है। भगवान् बुद्ध देव ने अपने जीवन-काल के ५० वर्ष, वर्षा ऋतु छोड़ कर, सतत पदयात्रा की। ज्ञान-संदेश घर-घर पहुँचाया। उसका चिरस्थायित्व इससे सिद्ध हो जाता है कि २५०० वर्ष के बाद दुनिया अब बुद्धयुग की ओर मुड़ रही है।

बापू ने १९३० से इस प्राचीन परम्परा का जीर्णोद्धार डांडी-यात्रा से किया और उसीकी पुनरावृत्ति विनोबाजी ने '५१ से की। यह भूदान-पद-यात्रा पिछले साढ़े पाँच वर्षों से अव्याहत रूप से चल रही है। इस 'सत्-आवन्' के वर्ष में राष्ट्र ने भूमिसमस्या हल करने का जो संकल्प किया है, उसके लिए यह पदयात्रा बड़ी प्रेरणा देने वाली है।

हमारा नम्र सुझाव है कि ता० ८ मार्च, ५७ से १८ अप्रैल, ५७ तक, एक मास दस दिन तक सारा देश पदयात्रा कर के इस बात का हृदय से प्रयत्न करे कि अपने क्षेत्र में बिना जमीन कोई नहीं रहेगा।

पदयात्रा से, २०।१।५७ —(बाबा) राघवदास

---

www.vinoba.in

श्री आशादेवी के नाम एक पत्र

पूज्य माताजी,

सेवा में सादर प्रणाम।

ता. २६-१०-५६ को आपका दर्शन किया। कांचन-मुक्त परिवार के बारे में थोड़ी बातें हुईं। यहाँ के काम के बारे में थोड़े में मैंने बताया था। आपसे आशीर्वाद लेकर करज़गाँव आया। हम सब कार्यकर्ता अगले वर्ष की योजना के बारे में सोच रहे हैं। सन् '५७ की योजना में संस्था के सभी कार्यकर्ता योग्यता के मुताबिक नहीं, जरूरत के मुताबिक खर्च लेंगे, एक निश्चित मर्यादा में खर्च करेंगे।

आज पूज्य विनोबाजी हम शिक्षकों से कम-से-कम जो आशा रखते हैं, उसमें यह एक मुख्य वस्तु है। सभी कार्यकर्ताओं ने गहराई से सोच-विचार कर यह योजना बनायी है।

आज ६ परिवार शामिल हो गये हैं, जिनमें कुल २४ व्यक्ति हैं।

प्रौढ़-पुरुष	६,	वृद्ध	१,	युवक	१ =	कुल	८
प्रौढ़ बहनें	५,	युवती	१			,,	६
उम्र १ से ६ माह							२
२ साल							२
४ साल							३
८ साल							१
९ साल							१
१३ साल							१
						कुल-	२४

कार्यकर्ता-परिवार ५, अविवाहित १, विधुर १ हैं। आदिवासी परिवार-१, हरिजन-परिवार १, अन्य ४, बुनाई जानने वाले ३ भाई, (२ सेवाग्राम-प्रशिक्षित, १ कलाकार), १ आदिवासी भाई और बहन खेती का काम जानते हैं। १ नर्स, मिडवाईफ है। ३ उत्तम-शिक्षक हैं।

हमारे पास खेती नहीं है। वस्त्र-स्वावलंबन कपास से कपड़ा-सिलाई तक करेंगे, ऐसा निश्चित किया है। भोजन-खर्च प्रति व्यक्ति, प्रति माह १५ रु० से अधिक नहीं होगा। इस मर्यादा में स्थानिक चीजों के द्वारा सभी को संतुलित भोजन मिले, इसकी सावधानी रखेंगे। दवा और निवास-खर्च प्रति व्यक्ति (कार्यकर्ता भाई-बहनें), प्रति माह ४ रु. रखा है। कपड़ा-खर्च ५ रु. प्रति माह के हिसाब से होगा। शिक्षक को साल में १ बार सफर-खर्च शिक्षा की दृष्टि से करना है। जो उसका लाभ उठायेंगे, उनको साल में ६० रु. तक खर्च मिलेगा। यह सारा खर्च नहीं किया, तो नहीं लेंगे। सिर्फ १० रु० तक अन्य आवश्यक चीजें ले सकेंगे। इस तरह प्रौढ़ कार्यकर्ता भाई-बहनों के लिए कुल २९ रु. तक मासिक खर्च होगा।

हमने हाथ में वेतन के रूप में पैसा न लेने का निश्चय तो किया है, लेकिन आश्रित वृद्ध माता-पिता, जो अपना निजी स्थान नहीं छोडना चाहते हैं, उनको पुत्र-धर्म के नाते प्रति माह कम-से-कम २० रु. मदद के रूप में नियमित भेजे जायेंगे। कई तरह से विचार करने के बाद हमें इस निर्णय पर आना पड़ा। ऐसा नहीं किया, तो वृद्ध माता-पिता की कई समस्याएँ सुलझा नहीं सकेंगे। अब यहाँ जो भाई-बहनें और बच्चे रहेंगे, उनका अन्न, वस्त्र, निवास, औषधि, शिक्षण का आवश्यक खर्च मर्यादित रूप में पूरा किया जायेगा। शादी और अन्य कार्य इस परिवार द्वारा आदर्श रूप में मनायेंगे। सभी लोग (काम करने लायक) ८ घंटा काम करेंगे-खेती, बुनाई, शिक्षा, आरोग्य आदि। १ घंटा वस्त्र-वस्त्रावलंबन-कवाई (अंबर चरखे द्वारा), १ घंटा सामुदायिक भोजनशाला का और सफाई का काम होगा। बाकी समय में अन्य ग्राम-सेवा का काम और स्वाध्याय होगा। आज हमने जो सोचा है, उसका एक चित्र आपके सामने रखा। उसकी विस्तृत लिखित योजना तैयार होने के बाद भेज दूँगा। आपके द्वारा इस योजना में समय-समय पर मार्गदर्शन की आवश्यकता है। हम शिक्षा के क्षेत्र में काम करने वाले कार्यकर्ता हैं, इसीलिए इस प्रयोग को भी शिक्षा के ढाँचे के अंदर ही रख कर करना है। माँ! इस समय हमारे लिए आपका खूब मार्गदर्शन मिलेगा, ऐसी आशा रखता हूँ।

(सर्वोदय-कुटी, करजगाँव लोणी-मध्यप्रदेश)
१३-११-५६

आपका नम्र
ना. रा. पवार

हमारा अपना अगला चुनाव!

(गोविंदन्)

आगामी आम चुनाव के समान फरवरी में सर्वोदयवालों के लिए भी एक 'चुनाव-आन्दोलन' का समय आ पहुँचा है! इस चुनाव से यह पता चलेगा कि जनता की हार्दिक इच्छा क्या है। इसमें 'बैलट पेपर' द्वारा नहीं, खुद की कती हुई सूत की एक गुंडी द्वारा हमें यह इच्छा बतानी है!

उत्पादक परिश्रम के आधार पर जो समाज हम बनाना चाहते हैं, उसपर हमारी जो श्रद्धा है, उसे वाणी द्वारा नहीं, काम द्वारा बताना होगी। उसके लिए हमारे सामने सूत्रांजलि का कार्यक्रम रखा गया है। जो लोग सूत्रांजलि अर्पण करेंगे, वे सब सर्वोदय-सिद्धांत को मानते हैं, ऐसा समझना चाहिए। अथवा जैसा विनोबाजी कहते हैं, सूत्रांजलि की हर एक गुंडी सर्वोदय-समाज कायम करने के लिए एक-एक वोट है।

सर्वोदय के वोटरों की संख्या १८ करोड़ से बहुत ज्यादा है। २१ साल की उम्र बीतने पर ही इसके वोटर हो सकते हैं, ऐसा नियम नहीं है। ४-५ साल के लड़के-लड़कियाँ भी इसके वोटर हो सकते हैं। विनोबा ने तो यहाँ तक कहा था कि इस चुनाव में चोर, डकैत और ताड़ी पीने वाले भी वोट दे सकते हैं, एक-एक गुंडी सूत के रूप में। चोर को चोरी से और साकी को ताड़ी से छुड़ाना भी हमारा ही काम है।

आज की हालत में हजार में एक वोटर हम मानें, तो भी साढ़ेतीन लाख गुंडी सूत हम आसानी से इकट्ठा कर सकते हैं। सर्वोदय को मानने वाले सभी सूतांजलि दे देंगे, इसमें तिल भर भी शंका नहीं। हम उन सबके पास पहुँच सकेंगे या नहीं, यही शक है। लाखों कत्तिनें हैं, नयी तालीम-विद्यालय हैं, रचनात्मक काम करने वाली संस्थाएँ हैं, काँग्रेसवाले, प्रजा समाजवादी इन सबका विश्वास सर्वोदय पर है। अतः सभी लोग इसमें जुट जायँ, तो १२ फरवरी को सूत की गुंडियाँ एक 'महामेरु' सहज खड़ा हो सकता है।

इसमें एक ही बाधा है, आम चुनाव की। १९५१ में कुछ सर्वोदयवालों के दिमागों में भी चुनाव का भूत सवार हो गया था, जिसके कारण गुंडियों की संख्या काफी कम हो गयी थीं। इस साल ऐसी असावधानी इस काम में न हो, इतना ध्यान रखना जरूरी है।

क्रांति की राह में-

पावन-प्रसंग

भूक्रांति ने आवाहन किया और 'श्रमभारती' ने उसमें कूदने का निश्चय जाहिर कर दिया! '५७ के क्रांतिकारी समीर के स्पर्श से हमारा हृदय आन्दोलित हो उठा। वैसे, पहले से ही खादीग्राम के समस्त जनों द्वारा साल भर तक मुंगेर जिले के गाँव-गाँव में क्रांति-संदेश पहुँचाने और सघन कार्य करने की सामूहिक योजना बन चुकी थी। हम छात्रों को एडवांस टोली के रूप में यात्रा करने की अनुमति भी प्राप्त हो गयी।

हमारी टोली में चार भाई थे। एक भाई पैर से कुछ रुग्ण भी थे। बारिश, हवा, तूफान का सामना करते हुए खेत की पतली फिसलनवाली मेंड से हम लोग गुज़र रहे थे। अँधेरा हो चला था। आगे बढ़ने की संभावना नहीं थी। गाँव में प्रवेश कर जाड़े की विभीषिका से त्रस्त, कीचड़-पानी में सने हुए हम लोग रात भर ठहरने के अभिप्राय से दरवाजे-दरवाजे घूमे, किन्तु कहीं भी प्रश्रय नहीं मिला। गाँव के बाहर की दूकान पर गये। वहाँ भी कोई गुंजाइश नहीं थी। बाहर मुश्किल से थोड़ी-सी बैठने की जगह थी। कंबल ओढ़ कर किसी प्रकार हम लोग वहीं बैठ गये। फिर भी भींग रहे थे। जाड़े से काँप रहे थे।

हम लोगों की इस यात्रा का मुख्य उद्देश्य 'मित्रलाभ' करना था। अचानक एक मोटा आदमी वर्षा में भींगता दौड़ता हुआ, "विनोबा बाबा के चेला,...विनोबा बाबा के चेला हो!" चिल्लाता हुआ हम लोगों के पास आया और हाथ जोड़ कर अपनी जीर्ण कुटी में चल कर रात भर विश्राम करने के लिए आग्रह करने लगा। सोचा, मानवता आज की सभ्यता के डर से भाग कर इन्हीं असभ्य कहे जाने वाले गरीबों की गलियों में कभी-कभी शायद आश्रम ले लेती है। वे भाई गाँव के चौकीदार, एक हरिजन भाई थे। पुवाल के गरम गद्दों पर इन्हींके यहाँ हम लोगों ने रात बितायी। सुबह इस गाँव में विचार-प्रचार का कार्य अच्छी तरह हुआ।

श्रमभारती, खादीग्राम

—उद्योगशाला के छात्र.

www.vinoba.in

साहित्य-सत्कार : परिचय

भारतीय ग्रन्थमाला, ९० हीवेट रोड, इलाहाबाद ३.

सर्वोदय-अर्थशास्त्र (दूसरा संस्करण), ले० भगवानदास केला, पृष्ठ ३३६, मूल्य चार रुपया।

सर्वोदय की दृष्टि से अर्थशास्त्र का विवेचन और सर्वोदयी अर्थशास्त्र का स्वरूप इस पुस्तक के द्वारा लेखक ने प्रस्तुत किया है। स्व०जाजूजी ने इसके संबंध में लिखा है : "विद्यार्थियों के लिए यह किताब विशेष उपयोगी साबित होगी और अध्यापकों को सर्वोदय के अर्थशास्त्र की विचार-धारा से परिचय प्राप्त होगा।"

अर्थनीति सर्वोदय की दृष्टि से, ले० उपर्युक्त, पृष्ठ ११६, मूल्य बारह आना।

सर्वोदय-अर्थशास्त्र की मूल बातें, ले० उपर्युक्त, पृष्ठ १२८, मूल्य सवा रुपया।

इन दोनों पुस्तकों में भी जीवन की छोटी-छोटी बातों का सर्वोदय के अर्थशास्त्र की दृष्टि से विचार किया गया है।

मेरा जीवन : सर्वोदय की ओर (तीसरा संस्करण), ले० उपर्युक्त, पृष्ठ ३६, मूल्य पाँच आना। लेखक की यह अपनी कहानी उसके साधक जीवन पर अच्छी प्रकाश-किरणें डालती हैं।

राजनैतिक क्रांति, आवश्यकता और स्वरूप, ले० जवाहिरलाल जैन, पृष्ठ ४८, मूल्य छह आना।

शासन, लोकतंत्र, पक्षपद्धति आदि पर लेखक का अपना विवेचन और चिंतन।

खेत गाँव का, खेती किसान की, ले० सुरेश राम, पृष्ठ २४, मूल्य तीन आना।

विनोबाजी के विचारों के आधार पर ग्रामदानी गाँवों के क्रांतदर्शन की एक सुंदर झाँकी।

श्यामसुन्दर-रसायनशाला, गायघाट, वाराणसी

बापू की दिनचर्या, ले० गौरीशंकर गुप्त, पृष्ठ ५६, मूल्य बारह आना।

सरल भाषा में बापू के दैनंदिन कार्यक्रम का परिचय और उसके साथ-साथ बापू की चंद विशेषताओं का भी परिचय। कुछ घटनाएँ गलत छप गयी हैं, पर अगले संस्करण में लेखक उन्हें ठीक कर रहे हैं।

मधु के उपयोग (तृतीय संस्करण), ले० पं० केदारनाथ पाठक, रासायनिक, पृष्ठ ११०, मूल्य एक रुपया।

शहद का आयुर्वेद की दृष्टि से महत्त्व, पहचान और विभिन्न रोगों पर शहद से लाभ; इसका लेखक ने सानुभव परिचय इसमें दिया है।

ग्राम्य-चिकित्सा (चतुर्थ संस्करण), ले० उपर्युक्त, पृष्ठ ४८, मूल्य दस आना।

घर-गृहस्थी की छोटी-छोटी चीजें और दैनंदिन व्यवहार में आने वाले खान-पान के सामान का ही औषधि की दृष्टि से क्या उपयोग है, यह इसमें बता कर अच्छा मार्ग-दर्शन किया है।

देहातियों की तंदुरुस्ती, ले० उपर्युक्त, पृष्ठ ७०, मूल्य बारह आना।

देहात के व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में रोग आदि न पैदा हो, इसलिए सावधानी की सूचनाएँ और छोटे-मोटे सहज उपचार इसमें हैं।

सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन, राजघाट, काशी

भूदान-गंगा : प्रथम खण्ड, द्वितीय खण्ड, ले० विनोबा, पृष्ठ क्रमशः २८२, ३०२, मूल्य हर एक का डेढ़ रुपया।

भूदान-आंदोलन के संदर्भ-ग्रंथ के रूप में इन पुस्तकों का महत्त्व और उपयोग बहुत अधिक है। शुरू से अब तक विनोबाजी के जो भाषण हुए, उनमें से महत्त्व के भाषण क्रम-क्रम से इन पुस्तकों के द्वारा प्रकाशित हो रहे हैं। महत्त्व की चर्चाएँ और प्रश्नोत्तर भी हैं। भूदान से ग्रामदान तक इस आंदोलन का कैसे विकास हुआ, इसकी यह एक परिचय-यात्रा ही होगी, जिससे आंदोलन की तात्त्विक और व्यावहारिक भूमिकाएँ सहज स्पष्ट हो जायेंगी।

सर्वोदय-पदयात्रा, ले० दामोदरदास मूँदड़ा, पृष्ठ २२६, मूल्य एक रुपया।

शिवरामपल्ली के सर्वोदय-संमेलन के लिए विनोबाजी पैदल ही चल पड़े। उस यात्रा का यह विचार-दर्शन है, जिसमें विविध समस्याओं पर विनोबाजी का व्यावहारिक और तात्त्विक दृष्टिकोण प्रस्तुत है। यात्रा का सजीव वर्णन भी साथ में गूँथा हुआ है।

ज्ञानदेव-चिंतनिका, ले० विनोबा, अनु० दामोदरदास मूँदड़ा, पृष्ठ १३८, मूल्य बारह आना।

जीवन के पाथेय के रूप में मराठी 'ज्ञानदेव चिंतनिका' का यह अधिकृत और सुंदर अनुवाद है। 'ज्ञानदेव-चिंतनिका' वास्तव में एक जीवन-शास्त्र ही है।

अन्य प्रकाशन

'ग्रामदान' (गुजराती), ले० हरिवल्लभ परीख, प्र० मंत्री, "आनंद-निकेतन" ट्रस्ट, पो० पानवड़, जि० बड़ोदा (बंबई राज्य), पृष्ठ ३२, मूल्य छह आना।

भूदान और ग्रामदान की विचार धारा का संक्षेप में परिचय और गुजरात की पार्श्वभूमि में उसका महत्त्व लेखक ने बताया है।

ग्रामदान मूवमेंट (अंग्रेज़ी), ले० मनमोहन चौधुरी, प्र० ग्रामसेवक समवाय प्रकाशन लि०, कटक; पृष्ठ २०, मूल्य चार आना।

ग्रामदानी गाँवों का संक्षिप्त लेखा और वहाँ के निर्माण-कार्य का सुन्दर परिचय लेखक ने प्रस्तुत किया है, जो बड़ा उपयोगी एवं महत्त्व का है।

धरती कउना का ? (भोजपुरी), ले. प्र. कु. मिश्र, सं० सुनीति मिश्र, प्र० ज्ञानशिला-प्रकाशन, लहेरियासराय (बिहार), पृष्ठ ४८, मूल्य आठ आना।

भोजपुरी भाषा में बिहार के भूदान-सेवक श्री प्रमोद कुमार मिश्र की यह छोटी-सी पुस्तक है, जिसमें उनके भाषणों का संग्रह है।

दृष्टिकोण :

कविश्री, सं० सियारामशरण गुप्त, प्र० साहित्य-सदन, चिरगाँव (झाँसी)

"कविश्री" के नाम से कुल दस काव्य-संग्रह 'साहित्य-सदन' चिरगाँव की ओर से प्रकाशित हुए हैं। उनका विवरण इस प्रकार है :

संस्कृत कवि भास के 'मध्यम व्यायोग" और "दूत घटोत्कच" नामक दो एकांकी के अनुवाद; श्री गुप्त-बंधुओं द्वारा किये हुए। कालिदास के "रघुवंश", "कुमार संभव", "मेघदूत", "शकुंतला" आदि सात रचनाओं के चुने हुए अंश, अनुवादिका : श्री महादेवी वर्मा।

इनके अतिरिक्त हिंदी के गौरव कवि श्री जयशंकर प्रसाद, श्री मैथिलीशरण गुप्त, श्री 'निराला', श्री दिनकर, श्री पन्त, श्री 'अज्ञेय', श्री महादेवी वर्मा और श्री सियारामशरण गुप्त की चुनी हुई रचनाओं का एक-एक संग्रह है। संपादकों ने कवियों की सहमति से कलाकृतियों का चुनाव किया है, लेकिन अपनी भी सुरुचि का उपयोग किया है, फलतः प्रत्येक संग्रह सुन्दर, प्रातिनिधिक और मनोहर बन गया है। अपनी 'संयोजना' में संयोजक श्री सियारामशरणजी गुप्त ने लिखा है : "कविश्री जिनके हाथ में हो, वह उनकी संस्कारशील रुचि का ही परिचय न दे, वरन् उनकी भावनाओं का उन्नयन भी कर सके।" ठीक यही दर्शन हर संग्रह में होता है। चयन में संयोजकों की कलामर्मज्ञता और रसात्मकता ही प्रकट हुई है। प्रत्येक संग्रह का आकार (डिमाई) और प्रकार समान है और प्रत्येक संग्रह सुन्दर आवरण-पृष्ठ से सुशोभित है। हर एक संग्रह पर क्रमसंख्या विवशता के कारण नहीं छप पायी है, जो अगले संस्करण में छपेगी।

प्रत्येक का मूल्य दस आना है। प्रत्येक की पृष्ठ-संख्या ४० और एक की ४८ है। कवियों का संक्षेप में परिचय भी जुड़ा हुआ है।

संयोजक की योजना है कि इसी तरह भारत की और भी प्रमुख भाषाओं के कवियों की कला-कृतियों का महत्त्वपूर्ण चयन निकले, जिसके लिए वे बधाई के पात्र हैं। —— —ल० भा०

अमरीकी कालेज-जीवन में स्वावलंबन

…अमरीकी शिक्षा-व्यवस्था का एक विशिष्ट पहलू यह है कि सम्भवतः अधिकांश छात्र, जिनमें युवक और युवतियाँ दोनों ही सम्मिलित होते हैं—अपना समूचा कालिज-खर्च या उसका कोई एक भाग कोई-न-कोई काम करके स्वयं अर्जित करते हैं। उनके ऐसा करने को कोई बुरी बात नहीं समझा जाता, बल्कि इसको तो एक स्वीकृत प्रथा माना जाता है कि अमरीकी कालिज के छात्र को काम-धंधा करके अपना खर्च पूरा करने का प्रयत्न करना ही चाहिए। स्कूलों में पढ़ते हुए वे होटलों में सेवकों का काम करते हैं; तश्तरियाँ धोते हैं, मरम्मत करते हैं, शारीरिक श्रम करते हैं, दूकानों में क्लर्की, अध्यापन-कार्य या अन्य कोई कार्य करते हैं और इस प्रकार अपना खर्च चला लेते हैं। ग्रीष्म के लम्बे अवकाश-काल में वे साधारणतः पूरे समय नौकरी या धनोपार्जन का अन्य कोई काम कर लेते हैं—जैसे खेतों में कठिन शारीरिक परिश्रम, सड़क-निर्माण, ट्रक-चालन तथा अन्य ऐसे ही कार्य। कभी-कभी वे ग्रीष्म-शिविरों में निरीक्षक का या राष्ट्रीय पार्कों में पथ-प्रदर्शकों का काम करते हैं। प्रायः ये लोग दूकानों, कारखानों में या कहीं भी, जहाँ रोज़गार सुलभ हो, काम करते हैं। इसलिए अमरीका में कालिज-विद्यार्थी काम करके चाहे अपना पूरा खर्च पैदा करे अथवा उसका एक भाग, वह शिक्षार्जन के महत्त्व को बड़ी अच्छी तरह समझता है।

("स्वतंत्रता के लिए शिक्षा" से) ——

www.vinoba.in

महाराष्ट्र में ग्रामदान की गंगा !

(बाबूलाल गांधी)

सामूहिक पदयात्रा महाराष्ट्र में जुलाई '५६ से ही शुरू हुई। उसे अकल्पित यश प्राप्त हुआ। पहली यात्रा में प्रथम प० खानदेश जिले में २ ग्रामदान मिले थे। बाद में नासिक जिले की यात्रा में ४ और फिर थाना जिले में १६ ग्रामदान मिले। तीनों जिलों के क्षेत्र आदिवासी विभाग के हैं। गाँव भी बहुत बड़े नहीं थे। लेकिन कुलाबा जिले में, जहाँ पूज्य विनोबाजी का जन्म-स्थान है, एक नया अध्याय शुरू हुआ। ८ दिन की यात्रा में २४ ग्रामदान मिले। ग्रामदान-पत्रों पर हस्ताक्षर करने वालों में कुछ अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोग भी थे। कुलाबा की पदयात्रा के शिविर को श्री गोविन्दराव देशपांडे ने लिखा था : 'ग्रामदान-शतक २६ जनवरी के पहले पूर्ण करें।' उस यात्रा में बहनों की एक टोली को ३ ग्रामदान मिले। उन्हेरे गाँव के उपसंहार के कार्यक्रम में कुल २४ ग्रामदान जाहिर किये गये।

कुलाबा जिले से कार्यकर्तागण रत्नागिरी जिले में पदयात्रा करने गये। महाराष्ट्र में सामूहिक पदयात्रा की योजना एक नये रूप में की गयी है। यात्रा में तंत्र कम-से-कम और निधि-मुक्ति मर्यादित रही। सामूहिक पदयात्रा अखंड चल रही है। कार्यकर्ताओं में आत्मविश्वास और लोगों में उत्साह बढ़ा है। सब कार्यकर्ता एकत्रित हो गये और वे पूरे महाराष्ट्र के कार्यकर्ता बन गये। अपने जिले तक ही सीमित न रह कर कार्यकर्ताओं का कारवाँ एक जिले से दूसरे जिले में जाता रहता है। रत्नागिरी के लोग शिक्षित, बुद्धिवादी, लगनशील, व्यवहारकुशल हैं। लोकमान्य तिलक, आगरकर, श्री धोंडो केशव कर्वे, श्री बालासाहब खेर आदि महान् व्यक्तियों का जन्म-स्थान रत्नागिरी जिला है। यहाँ की आर्थिक समस्या गंभीर है। जमीन उपजाऊ नहीं है। अनेक लोग बंबई में नौकरियाँ करते हैं। आवागमन के साधनों की कमी है, पर जमीन का प्रेम बहुत है। चिपळूण में पदयात्रा के उपसंहार-समारोह में ५३ ग्रामदानों की घोषणा की गयी। किसीको पता नहीं था कि इतने जल्दी ग्रामदान-शतक पूरा हो जायगा। इस यात्रा में एक गाँव में तो लोग यात्रिकों की राह ही देखते थे कि कब वे आयेंगे और कब हम ग्रामदान करेंगे। रत्नगिरी जिले में कुल ७५ ग्रामदान मिल चुके हैं। इस जिले की पदयात्रा का समाप्ति-समारोह १० जनवरी को मालवण में हुआ।

अब महाराष्ट्र के कार्यकर्ता 'फिरका-दान' या 'तालुका-दान की भाषा बोलने लगे हैं। कोल्हापुर जिले में श्री गोविंदराव देशपांडे संयोजन कर रहे हैं। ता० १२–१३ को मुरगुड में शिविर हुआ और मकर-संक्रान्ति के शुभ मुहूर्त पर कोल्हापुर जिले की पदयात्रा शुरू हुई है। २३ जनवरी तक ६ ग्रामदान वहाँ मिले। यहाँ के काश्तकार अत्यन्त कुशल हैं। जमीन उत्तम है। प्रति एकड़ एक हजार रुपयों से अधिक कीमत की फसल होती है। कोल्हापुर में जो होता है, उसका परिणाम सारे महाराष्ट्र पर होता है, ऐसा कहा जाता है। तंत्रमुक्ति और निधिमुक्ति के बाद होने वाली इस यात्रा में तालुकदान, संपत्तिदान, अन्नदान; इन सबका समावेश किया है। विनोबाजी महाराष्ट्र में आने वाले हैं, यह महाराष्ट्र का बड़ा भाग्य है, ऐसा सब लोग समझते हैं। त्याग, औदार्य और विचारों से जिस भूमि का सिंचन अब तक हुआ, उसका जेष्ठ-श्रेष्ठ पुत्र जब आयेगा, तब महाराष्ट्र की ग्रामदान-गंगा स्वागत के लिए बहने लगेगी, ऐसा विश्वास है। अब तक तो १४७ से अधिक ग्रामदान हो गये हैं।

आरोहण की तैयारी में---

विनोबाजी ने अपनी अंतेवासिनी लड़कियाँ कु० निर्मला देशपांडे एवं कुमारी कुसुम देशपांडे को भूदान-आरोहण के निमित्त नये बंबई राज्य के औरंगाबाद और चांदा जिलों में भेजना तय कर लिया है।

उसी प्रकार माधान (बरार)–आश्रम और सर्व-सेवा-संघ के एक तेजस्वी लोक-सेवक-काका अत्रे की भी रवानगी परभणी (बंबई-राज्य) की ओर हो रही है। —पत्र से

महाराष्ट्र के अनन्य सेवक श्री बाळूभाई मेहता के अग्रज श्री हरकिसनदास भाई का देहान्त अस्सी वर्ष की उम्र में, धुलिया में, ता० २० को हुआ। अपने छोटे भाइयों का पिता के समान पालन-पोषण करके, सार्वजनिक कामों में भाग लेने के लिए श्री बाळूभाई को वे सतत बल पहुँचाते रहे। वे स्वयं भी निरलस-सेवा-भावी थे और सार्वजनिक कामों में रस लेते थे। हम सब इस कौटुंबिक हानि में सहभागी हैं। —रामेश्वर पोद्दार

संवाद-सूचनाएँ :

आचार्य दादा धर्माधिकारी की व्याख्यान-माला

बंबई में २ फरवरी से ७ फरवरी तक श्री दादा धर्माधिकारी के व्याख्यानों का आयोजन किया गया है। देश के सब भूदान-कार्यकर्ताओं को इसमें भाग लेने के लिए हार्दिक आमंत्रण है। प्रवास-खर्च आने वालों का होगा।

पता : बंबई भूदान-कार्यालय, 'मणिभुवन'
१९ लेबरनम रोड, गाँवदेवी, बंबई ७ —गणपतिशंकर देसाई

प्रकाशन-समाचार

६–१–५७ के "नवभारत टाइम्स" ने 'साहित्य-समीक्षा'- स्तम्भ में लिखा है:

भूदान-यज्ञ क्या और क्यों ?, ले० चारुचन्द्र भण्डारी, पृष्ठ ३०० मूल्य १)

...वस्तुतः यह अमरीका के राष्ट्रीय कवि वाल्ट ह्विटमन के उस काव्य-संग्रह के तुल्य है, जिसके विषय में एक आलोचक ने कहा था : "Whoever spells this book, spells a man !" पुस्तक छोटे-छोटे सौ प्रकरणों में विभक्त है और प्रत्येक प्रकरण अपने आप में पूर्ण है।

सामूहिक पदयात्रा : ले० ठाकुरदास बंग, पृष्ठ ४२, मूल्य ।)

भूदान-यज्ञ में सामूहिक पद-यात्राओं का अपना विशिष्ट महत्त्व है। लेखक ने इसी महत्ता को छोटी-सी पुस्तक में संक्षेप में सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया है।

पुनर्मुद्रित पुस्तकें :

कताई-गणित, भाग ३ : श्री श्रीकृष्णदास गांधी की इस पुस्तक का मूल्य १) से घट कर ।।।) हो गया है, पर पृष्ठ उतने ही और छपाई, सफाई सब आकर्षक।

गाँव-आन्दोलन क्यों ? : सर्वोदय के जाने-माने विचारक श्री कुमारप्पाजी की 'why the village movement ?' पुस्तक का हिन्दी अनुवाद। यह संस्करण परिष्कृत एवं परिवर्द्धित रूप में हाथ-कागज़ पर छपा है। ३।।) के बजाय अब २) में प्राप्त है।

भूदान-लहरी : भोजपुरी भाषा में जन-प्रिय संगीत-प्रधान लोकगीतों का यह संग्रह पाकेट साईज़ में सुन्दर प्रतीत होता है। पृष्ठ ३२ और मूल्य एक आना।

अ० भा० सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन, राजघाट, काशी

महाराष्ट्र की सामूहिक पदयात्रा के दौरान में कोल्हापुर जिले से "आजरा महाल" नामक ५२ गाँवों का एक संपूर्ण सर्कल 'फिरकादान' या 'तालुकादान'के प्रारंभिक कदम के तौर पर प्राप्त हो गया है, जिसकी कि माँग विनोबाजी ने अब, ग्रामदान के बाद, शुरू की थी। उस माँग का ही यह श्रीगणेश सारे भारत में सर्वप्रथम महाराष्ट्र में हुआ है। —तार से

सूची :

१. निधि-मुक्ति और तंत्रमुक्ति का रसायन...	दादा धर्माधिकारी	१	
२. स्वराज्य की कसौटी : बालक !	विनोबा	२	
३. मूल्य-परिवर्तन की क्रांति और छात्र : १.	जयप्रकाश नारायण	३	
४. इंगलैण्ड में भूदान-सहायता-यात्रा	हैलम् टेनीसन	४	
५. सत्-आवन की प्रार्थना : ३	आशादेवी आर्यनायकम्	४	
६. संस्कृति-समन्वय का शिखर !	विनोबा	५	
७. छिपी हुई दौलत !	"	६	
८. सन् सत्तावन् का आह्वान !	जयप्रकाश नारायण	६	
९. इस तरह अपने को मत ठगिये !	विनोबा	७	
१०. सर्व-सेवा-संघ का चुनाव-प्रस्ताव	दादा धर्माधिकारी	८	
११. क्रांतियज्ञ में छात्र	बाबा राघवदास	८	
१२. विनोद की घड़ियों में १.	श्रीकृष्णदत्त भट्ट	९	
१३. श्री आशादेवी के नाम एक पत्र	ना० रा० पवार	१०	
१४. हमारा अपना अगला चुनाव !	गोविंदन्	१०	
१५. साहित्य-सत्कार परिचय	—	११	
१६. महाराष्ट्र में ग्रामदान की गंगा !	बाबूलाल गांधी	१२	

सिद्धराज ढड्ढा, सहमंत्री अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भागव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : पोस्ट बॉक्स नं०४१, राजघाट, काशी।

www.vinoba.in